खंड 2
खाद्य उत्पादन का आगमन और हड़प्पा सभ्यता

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 4 नवपाषाण काल*

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 जलवायु और जीविका निर्वाह में परिवर्तन

4.3 नवपाषाण संस्कृति

- 4.3.1 नवपाषाण क्रांति की अवधारणा
- 4.3.2 शिकार-भोजन संग्रह से कृषि के संक्रमण के बारे में वाद-विवाद
- 4.3.3 वैश्विक संदर्भ में नवपाषाण काल
- 4.3.4 नवपाषाण और समकालीन संस्कृतियां

4.4 भारत की नवपाषाण संस्कृतियां

- 4.4.1 उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति
- 4.4.2 उत्तरी क्षेत्र (कश्मीर) की नवपाषाण संस्कृति
- 4.4.3 विंध्य पहाड़ियों की नवपाषाण संस्कृति, बेलन व गंगा नदी की घाटियाँ
- 4.4.4 मध्य-पूर्वी गंगा घाटी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति
- 4.4.5 मध्य-पूर्वी भारत की नवपाषाण संस्कृति
- 4.4.6 पूर्वोत्तर भारत की नवपाषाण संस्कृति
- 4.4.7 दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृति

4.5 सामाजिक संगठन और आस्था प्रणाली

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.9 संदर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के पश्चात आप जानेंगे :

- भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न भागों में कृषि की शुरुआत के बारे में;
- पशुपालन का विकास और शिकार-भोजन संग्रहण से कृषि की ओर संक्रमण के बारे में;
- भारत क्षेत्रीय पृष्ठभूमि में नवपाषाण संस्कृतियों के बारे में;
- मेहरगढ़ स्थल के महत्व के बारे में; तथा
- दक्षिण भारतीय नवपाषाण संस्कृति की विशिष्ट विशेषता, राख के टीलों के बारे में।

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में नवपाषाण संस्कृति की परिभाषा, प्रकृति और विशेषताओं के बारे में विस्तार से विवरण प्रस्तुत किया गया है। इसमें भारतीय नवपाषाण युग के बारे में केंद्रित अध्ययन पर चर्चा की गयी है।

* प्रो. वी. सेल्वा कुमार, समुद्री इतिहास और समुद्री पुरातत्व विभाग, तमिल विश्वविद्यालय, तंजावुर।

नवपाषाण मानव संस्कृति के इतिहास का एक बहुत महत्वपूर्ण चरण था जब मानव पूरी तरह से प्रकृति पर निर्भर नहीं था तथा उसने अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए प्रकृति का दोहन करना शुरू कर दिया था। प्रकृति के साथ मनुष्यों के लंबे जुड़ाव ने उसे कुछ पौधों और जानवरों की उपयोगिता को समझने में सक्षम बनाया, जिसमें वे अपनी आवश्यकताओं के अनुसार बदलाव कर सकते थे। उन्होंने कुछ जानवरों को कृषि कार्य में सहायता के लिए पालना शुरू किया तथा कुछ उपयोगी किस्मों की खेती करके भोजन की आत्मनिर्भरता की दिशा में कदम बढ़ाया। कृषि के लिए जंगल साफ करना और भूमि को जोतना आवश्यक था। खानाबदोश जीवन से निकलकर लोग गाँवों में बसने लगे तथा नई तकनीकों के साथ बने नए-नए उपकरण इस्तेमाल किए जाने लगे। यद्यपि निर्वाह के लिए पौधे उगाना और जानवरों का पालन आदि नई रणनीतियों का शुभारम्भ था किंतु शिकार और भोजन इकट्ठा करने जैसे पुराने तरीके बदस्तूर जारी रहे।

4.2 जलवायु और जिविका-निर्वाह में परिवर्तन

प्रगैतिहासिक काल को विभिन्न सांस्कृतिक युगों में विभाजित किया गया है जैसे, पुरापाषाण युग, मध्य पाषाण युग, नवपाषाण युग और ताम्रपाषाण युग। इन युगों में नवपाषाण युग, पुरापाषाण युग व मध्य पाषाण युग के बाद आया तथा ताम्रपाषाण युग से पहले आया। पुरापाषाण और मध्य पाषाण युग में मनुष्य भोज्य पदार्थ का उत्पादन नहीं करते थे। वे जानवर नहीं पालते थे तथा उस समय खेती करना प्रारम्भ नहीं हुआ था। वे प्राकृतिक रूप से उपलब्ध पौधों के भोजन जैसे कि कंद, फल, पत्ते और फलियाँ इकट्ठा करते, मछलियाँ मारते और जंगली जानवरों का शिकार करते थे। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि मध्य पुरापाषाण काल के उत्तरार्ध व उच्च पुरापाषाण काल के पूर्वार्द्ध में लोग किसी भी प्रकार का बाग़वानी कार्य, पौधों की रोपाई या जानवरों को पालने का कार्य करते थे। प्रागैतिहासिक काल का सामाजिक संगठन जानवरों के शिकार, जंगलों से खाद्य पदार्थ इकट्ठा करने का कार्य से प्रभावित था। शिकार और जंगल से एकत्र किया भोजन सीमित होता था तथा इसे खा कर तुरंत खत्म करना पड़ता था। इस अवधि में लोगों ने छोटे-छोटे समूहों में रहना शुरू कर दिया था तथा जिस क्षेत्र में संसाधन भरपूर होते थे उधर लोग बडे-बड़े समूहों मे रहने लगे थे।

दुनिया के कुछ हिस्सों में अभिनूतन (Holocene) काल की शुरुआत में कई सांस्कृतिक परिवर्तन हुए, जिससे नवपाषाण संस्कृतियों का विकास हुआ। हिमयुग की समाप्ति के पश्चात दुनिया के कई हिस्सों में अतिकालीन प्रातिनूतन काल से अभिनूतन काल तक के संक्रमण के दौरान जलवायु में प्रमुख बदलाव के बारे में बताया गया है। दुनिया भर में गर्म जलवायु शुरू हुई, जिससे जानवरों और पौधों की आबादी और उनके वितरण की प्रकृति में बदलाव आया। इन पर्यावरणीय परिवर्तनों ने नवपाषाण संस्कृतियों को प्रभावित किया और नवपाषाण काल के लोगों के जीवन के तरीकों को कुछ हद तक निर्धारित किया। हालांकि, लोगों ने बदलती जलवायु परिस्थितियों के कारण अपने जीवन- पद्धति में तदनुसार परिवर्तन करने सम्बंधी महत्वपूर्ण सांस्कृतिक निर्णय लिए।

नवपाषाण संस्कृतियाँ ग्रामीण और कृषि संस्कृतियाँ थीं, तथा उन्हें धातु के बारे में ज्ञान नहीं था। वे पत्थर के परिष्कृत औजारों, पत्थर के औजारों और मिट्टी के बर्तनों का इस्तेमाल करते थे। नवपाषाण काल में, मनुष्यों ने पौधों की खेती और घरेलू पशुओं का पालन करना शुरू कर दिया था । उन्होंने प्राकृतिक संसाधनों को अपनी ज़रूरत के हिसाब से प्रभावी रूप से संशोधित, नियंत्रित और प्रबंधित करना शुरू किया। इन उपायों से उनकी खाद्य सुरक्षा बढ़ने के साथ ही साथ, उनके जीवन जीने के तरीके भी बदल गए। चूंकि उन्होंने जानवरों

और पौधों को पालतू बनाया, इसलिए उन्हें जानवरों और पौधों की देखभाल करने के लिए स्थायी रूप से या विशेष समय के लिए एक जगह पर बसना पड़ा। उनकी आर्थिक जिम्मेदारियों में वृद्धि हुई तथा वे कुछ हद तक पौधों, चरागाहों, जानवरों और सिंचाई के गहन प्रबंधन कार्य से जुड़े। उन्होंने पौधों और जानवरों के चयनात्मक प्रजनन का अभ्यास किया और पर्यावरण का अच्छा ज्ञान और समझ विकसित की। हालांकि, नवपाषाण के आगमन का मतलब यह नहीं है कि लोगों ने जानवरों का शिकार करना और पौधों व कंद मूल आदि खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करना बंद कर दिया। उन्होंने जंगली जानवरों का शिकार करना जारी रखा तथा पौधों व कंद मूल आदि खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करते रहे। अपने आहार को पूरा करने के लिए मछली पकड़ने का कार्य भी करते थे, क्योंकि विभिन्न खाद्य संसाधनों की खपत उनकी भौतिक आवश्यकताओं और प्रभावी अस्तित्व के लिए आवश्यक थी।

4.3 नवपाषाण संस्कृति

'नवपाषाण' शब्द का प्रयोग पहली बार सर जॉन लुबॉक ने 1865 में प्रकाशित अपनी पुस्तक में किया था। वे इंग्लैंड के अवेबरी के पहले सामंत (जन्म 1834- मृत्यु 1913) थे। सांस्कृतिक ऐतिहासिक अनुक्रम में नवपाषाण युग की अवधारणा को जोड़कर, उन्होंने तीन युग प्रणाली (पाषाण युग, कांस्य युग और लौह युग) को परिष्कृत करने की मांग की, जिसे 1830 के दशक में सी. जे. थॉमसन द्वारा प्रस्तावित किया गया था।

'नव' शब्द का अर्थ है नया, और 'लिथिक' का अर्थ है पत्थर। पुरापाषाण (पुराने पाषाण युग) काल के विपरीत, इस अवधि में लोगों ने पॉलिश किए गए पत्थर के औजारों और कुल्हाड़ियों का उपयोग करना शुरू किया, जिन्हें अक्सर **सैल्ट** कहा जाता था। नव पाषाण काल के उपकरण पुरापाषाण काल (चित्रा 4.1) के बेडौल परतदार पत्थर के औजारों की तुलना में अधिक परिष्कृत दिखाई देते हैं।

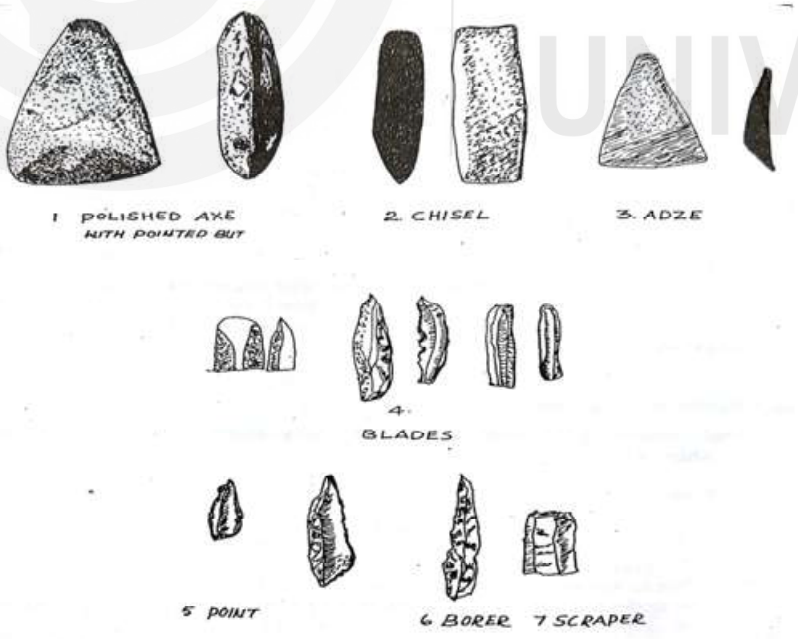

चित्र 4.1: दक्षिण भारत में नवपाषाण ब्लेड और पत्थर उपकरण उद्योग। स्रोत: EHI-02, खंड-3।

विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में शामिल होने के कारण उन्हें विविध प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता थी। आम तौर पर, पुरापाषाण उपकरण में खुरदरी या बारीक फलक वाली सतह होती है। कभी-कभी, पत्थरों को काट-छाँट कर तराशते समय इसकी प्राकृतिक

अवस्था को बनाए रखा गया था जिसे वे उपकरणों के उपयोग के दरम्यान हत्थे के रूप में इस्तेमाल करते थे। पुरापाषाण काल में औजारों को पॉलिश करने के ज्यादा प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। नवपाषाण काल में उन्होंने पत्थर के कुछ उपकरणों को पॉलिश किया। हालांकि, उन्होंने परत दार (Flaked) बगैर अपरिष्कृत किए औजारों का उपयोग जारी रखा। बाद के वर्षों में नव पाषाण की अवधारणा में बहुत बदलाव आया है। अब, यह प्रारम्भिक ग्रामीण और खेती वाले पशुपालन समुदायों को दर्शाता है जिन्होंने धातु का उपयोग नहीं किया था।

4.3.1 नवपाषाण क्रांति की अवधारणा

प्रारम्भिक अभिनूतन काल के कृषि-पशु पालक सांस्कृतिक विकास को 1941 में वी. गॉर्डन चाइल्ड ने नवपाषाण क्रांति का नाम दिया। नवपाषाण और ताम्र पाषाण युगीन संस्कृतियों को उनके अनुसार खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं में माना जाता था। नवपाषाण क्रांति की अवधारणा कृषि की शुरुआत, पशु पालन और स्थायी जीवन को व्यवस्थित बनाने के तरीके को दर्शाता है। यह खाद्य सामग्री एकत्र (शिकार-संग्रह) करने वाली अर्थव्यवस्था से खाद्य उत्पादन (कृषि-पशुपालन) अर्थव्यवस्था में परिवर्तन का संकेत है। जीवन के नवपाषाण काल से संबंधित क्रांति का विचार मानव के सांस्कृतिक अनुकूलन का संकेत है। माइल्स बर्किट ने नवपाषाण संस्कृति की पहचान पॉलिश किए गए औजारों, जानवरों और पौधों को पालतू बनाने के रूप में की। इस प्रकार, 'नवपाषाण' अकेले नए उपकरणों (चित्र 4.2) के उपयोग को निरूपित नहीं करता है बल्कि सांस्कृतिक अनुकूलन के नए तरीके और जीवन के तरीके को भी दर्शाता है।

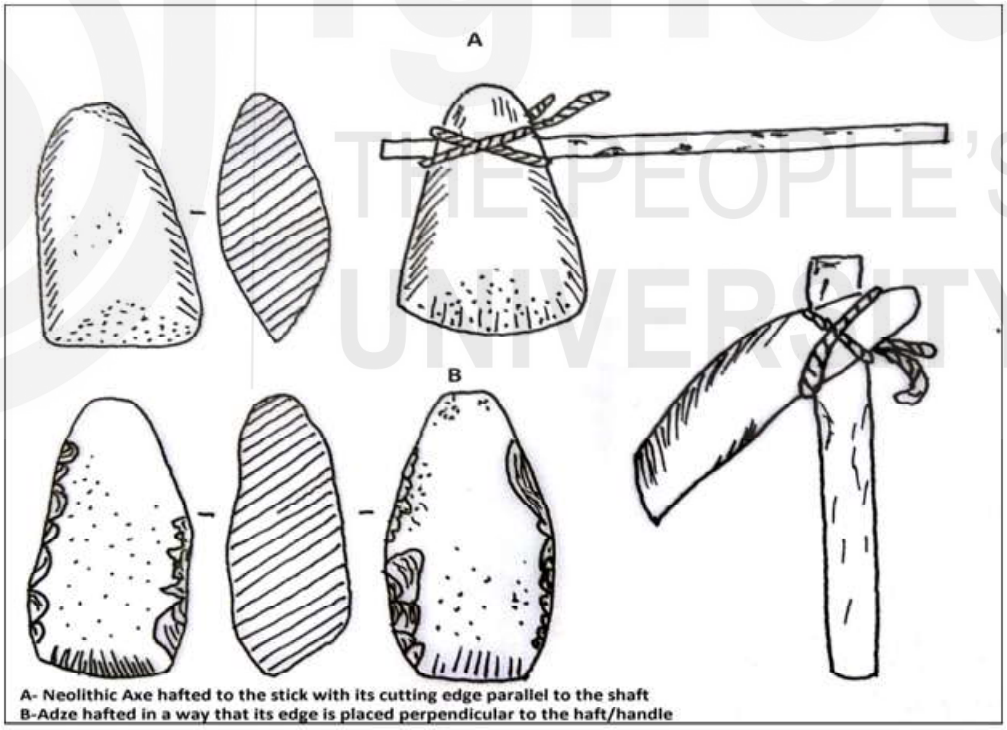

चित्र 4.2: नवपाषाण उपकरण। स्रोतः एम.ए.एन.-002, खंड-7।

पौधा रोपन और पशु पालन की शुरुआत होने पर बड़ी मात्रा में अनाज और पशुओं के भोजन का उत्पादन हुआ। अब इन उत्पादित भोजन का संग्रह करने हेतु मिट्टी के बर्तनों का निर्माण हुआ। चुंकि शैल आश्रय से दूर खुले इलाकों में रहना शुरू हो गया था अतः धूप बारिश व हिंसक जानवरों से बचाव के लिए घर बनाए गए। धीरे-धीरे बड़े गाँव विकसित हुए और स्थायी आवास बनाए गए। मवेशियों और भेड़ों की रक्षा के लिए बस्तियों की घेराबंदी की गई। इन गतिविधियों से धीरे-धीरे खाद्य भंडार में वृद्धि और शिल्प कला में विशेषज्ञता प्राप्त

हुई। खाद्य सुरक्षा के कारण अधिक लोग गांवों में बस सकते थे। अतः इस अवधि के सांस्कृतिक विकास को नवपाषाण क्रांति का नाम दिया गया।

अधिशेष खाद्य उत्पादन, प्रारंभिक शहरी संस्कृतियों के विकास के मुख्य कारकों में से एक था। इससे विभिन्न शिल्पों, शहरी संरचनाओं और शुरुआती राज्यों के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ तथा कांस्य युग का आरम्भ हुआ।

4.3.2 शिकार-भोजन संग्रह से कृषि के संक्रमण के बारे में वाद-विवाद

खेती की शुरुआत कैसे हुई इस बारे में प्रस्तुत मतों में भिन्नता है। वी. गॉर्डन चाइल्ड के अनुसार जलवायु परिवर्तन के कारण उपजाऊ अर्धचन्द्राकार प्रान्त (दक्षिण-पश्चिम एशिया) में खेती की शुरुआत हुई। भू-आकृति विज्ञान और जलवायु कारकों के परिणामस्वरूप रेगिस्तान के विशाल भूखंड से अलग एक मरूद्यान का निर्माण हुआ। इन मरूद्यानों के आस पास अधिक से अधिक संख्या में मनुष्य अपने पशुओं के साथ रहने लगे तथा इस क्षेत्र में कृषि का विकास हुआ। इस तरह जानवर व मनुष्य के साथ-साथ रहने की वजह से मनुष्यों ने जानवरों को पालतु बनाना शुरू किया।

रॉबर्ट ब्रैडवुड ने जलवायु परिवर्तन की इस धारणा को चुनौती दी और खाद्य उत्पादन के धीमे और क्रमिक विकास से होने की बात कही है। जिन नाभिक क्षेत्रों में प्रचुर मात्रा में पशु और पौधों की प्रजातियां थीं, खेती की शुरुआत वहीं से हुई। पौधा रोपन और पशुपालन कार्य की ओर परिवर्तन हुआ क्योंकि संस्कृति उस स्तर को प्राप्त कर चुकी थी जहाँ से परिवर्तन अवश्यम्भावी था। इस प्रकार, कृषि में संक्रमण काफ़ी हद तक मानव प्रकृति और पर्यावरणीय परिस्थितियों में परिवर्तन जैसे कारकों के संयोजन के कारण था।

लुईस आर. बिनफोर्ड द्वारा कृषि की शुरुआत के लिए जनसंख्या गतिकी को मुख्य निर्धारक माना गया है। जनसंख्या में वृद्धि की वजह से कृषि कार्य अनिवार्य हो गया। 9000 बी.सी. ई. के आसपास पूरब में स्थित कुछ गतिरहित समूहों में जनसंख्या के दबाव ने प्राकृतिक संसाधनों का अधिक गहन दोहन किया, जिससे कृषि करना आवश्यक संभव हो गया।

कैंट फ्लैनरी का मानना था कि कृषि की शुरुआत एक घटना के बजाय एक लंबी प्रक्रिया थी। उनके अनुसार, शिकारी एवं संग्रहकर्ता का एक जगह से दूसरी जगह मौसमी प्रस्थान कुछ इस तरह से निर्धारित किया गया था कि वे अलग-अलग परिस्थितिकी क्षेत्रों में स्थित विभिन्न पौधों और जानवरों का भरपूर दोहन कर सकें। इस प्रकार, उनके पास कुछ पौधों और जानवरों के बजाय एक विस्तृत अर्थव्यवस्था तक पहुंच थी। मक्का और गेहूं जैसे कुछ पौधों के संकर (हाइब्रिड) किस्मों को विकसित किया गया और इसे वर्ष के विभिन्न समय में उगाया जाने लगा। इस प्रकार, शिकारी और संग्रह जीवन के पुराने तौर-तरीके (पैटर्न) को दीर्घकालिक पड़ाव और खाद्य उत्पादन के आधार पर कृषि निर्वाह के पैटर्न में बदलाव हुआ।

एक विचारधारा के अनुसार, संस्कृति को पर्यावरण के साथ अनुकूलन के रूप में देखा जाता है। हालांकि, संस्कृति को आंशिक रूप से पर्यावरण के साथ अनुकूलन के रूप में और आंशिक रूप से विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों के साथ मनुष्यों द्वारा किए गए सचेत निर्णय के परिणाम के रूप में देखा जाना चाहिए। ट्रेवर वॉटकिंस ने तर्क दिया कि अर्थव्यवस्था-आधारित परिवर्तन की पुरानी धारणाओं ने समाजों के 'संस्कृति और अनुभूति' आधारित परिवर्तन को रास्ता दिया। उन्होंने तर्क दिया कि शिखांत-पुरापाषाण युग के लोग पहली वृहत स्थायी समुदायों के रूप में व्यापक बस्तियों का निर्माण करने के लिए आए थे, जिनका भरन पोषण कृषि द्वारा केवल बाद में किया जाना था। यहाँ तर्क यह नहीं है कि

कृषि एक अचानक आविष्कार या घटना के रूप में विकसित हुई, बल्कि लोगों के एक बड़े समूह को खिलाने की आवश्यकता के रूप में एक क्रमिक प्रक्रिया के रूप में विकसित हुई। ट्रेवर वॉटकिंस ने सुझाव दिया कि लेवांत के शिखांत-पुरापाषाण युग में लोगों के छोटे-छोटे समूह धीरे-धीरे बड़े सह-निवासी समुदाय में परिवर्तित हो गए। कृषि और पशु पालन बाद में विकसित हुआ। उन्होंने सुझाव दिया कि सामाजिक और सांस्कृतिक कारक आर्थिक आवश्यकताओं की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण थे और लोगों ने बड़े समुदायों में रहने पर अधिक ज़ोर दिया जिससे खाद्य उत्पादन शुरू हुआ।

इस प्रकार, नवपाषाण क्रांति वास्तव में, एक लंबी प्रक्रिया थी, जो सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों और पर्यावरणीय स्थिति से प्रभावित थी। यह कोई साधारण एक बार का आविष्कार या एपिसोड नहीं था, जैसा कि कुछ लोगों ने कल्पना की थी।

4.3.3 वैश्विक संदर्भ में नवपाषाण काल

कृषि और पशु पालन की शुरुआत के रूप में नवपाषाण काल की पारंपरिक अवधारणा, स्थायी बस्तियों और समय के एक विशिष्ट बिंदु पर मिट्टी के पात्र की शुरुआत (या एक पैकेज के रूप में) के रूप में नहीं मानी जा सकती है। ये सांस्कृतिक लक्षण, कभी-कभी एक साथ और कभी-कभी अलग अलग, दुनिया के विभिन्न हिस्सों में विकसित हुए। सभी नवपाषाण समुदाय पूरी तरह से गतिहीन नहीं थे और कुछ समुदाय अर्ध-गतिहीन थे और खानाबदोश जीवन जीते थे।

नव पाषाण युग के प्रारंभिक साक्ष्य उपजाऊ क्रीसेंट (अर्धचन्द्रीय क्षेत्र) जिसमें मिस्र की नील नदी की घाटी, इज़राइल, फिलिस्तीन, सीरिया और मेसोपोटामिया सम्मलित है; सिंधु क्षेत्र और भारतीय उपमहाद्वीप की गंगा घाटी; चीन और मेसो-अमेरिका तक पाए जाते हैं। लगभग 10,000 से 5,000 बी.सी.ई. तक दुनिया के कई हिस्सों में कृषि और पशुपालन संस्कृति का उदय हुआ, जिससे कई सांस्कृतिक विकास हुए। यद्यपि कृषि की आरम्भिक शुरुआत दुनिया के कई हिस्सों में हुई तथापि दक्षिण-पश्चिम एशिया में कृषि और पशु पालन के विकास के सबसे शुरुआती प्रमाण मिले हैं। इज़राइल, फिलिस्तीन और सीरिया (लेवांत), तुर्की और इराक के क्षेत्र में नौवीं सहस्राब्दी बी.सी.ई. के आसपास नवपाषाण गांवों का प्रारंभिक विकास पाया गया है।

4.3.4 नवपाषाण और समकालीन संस्कृतियां

नवपाषाण संस्कृति को मानव इतिहास में एक प्रमुख मोड़ के रूप में देखा जाता है। हालांकि, दुनिया के सभी क्षेत्रों ने नवपाषाण संस्कृति को नहीं देखा। नवपाषाण युग के लोगों के रहन-सहन के तरीके दक्षिण-पश्चिम एशिया, मिस्र, यूरोप, मेसो-अमेरिका, भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग, भारत में गंगा घाटी और चीन जैसे क्षेत्रों में जल्दी दिखाई दिये हैं तथा अन्य क्षेत्रों में काफ़ी दिनों बाद दिखाई दिये। नवपाषाण संस्कृति पहली बार भारत के उत्तर-पश्चिमी भागों में दिखाई दी। कश्मीर, दक्षिण भारत और पूर्वी भारत में यह बाद के चरण में दिखाई दी। भारत के कुछ क्षेत्रों ने नवपाषाण संस्कृतियों को बिल्कुल भी नहीं देखा और मध्य पाषाण संस्कृति के बाद लौह युग संस्कृति का शुभारम्भ हुआ, तमिलनाडु और केरल इसका उदाहरण हैं।

भारत की सभी नवपाषाण संस्कृतियों में सांस्कृतिक अनुकूलन एक ही स्तर का था। भारत की नवपाषाण संस्कृतियां, हड़प्पा, ताम्र पाषाण युग और लघु पाषाण का उपयोग करने वाले शिकारी-संग्रह संस्कृति के साथ समकालीन थीं। इस प्रकार, यह ध्यान देने योग्य बात है कि भारत की नवपाषाण संस्कृतियां अलग-थलग सांस्कृतिक इकाइयाँ नहीं थीं। वास्तव में, तांबे

के उपयोग को छोड़कर, ताम्र पाषाण युग की संस्कृतियों और नवपाषाण संस्कृतियों के बीच बहुत अंतर नहीं देखा गया है।

बोध प्रश्न 1

1) नवपाषाण क्रांति की अवधारणा पर संक्षिप्त चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) शिकार-संग्रह प्रणाली से कृषि तक संक्रमण के बारे में परिचर्चा की मुख्य विशेषताओं पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

4.4 भारत की नवपाषाण संस्कृतियां

नवपाषाण संस्कृतियां पाषाण युग के अंत को चिह्नित करती हैं। भारत का नवपाषाण काल एक महत्वपूर्ण चरण है। 1842 में भारत में कर्नाटक के रायचूर जिले में ले मेसुरी द्वारा और बाद में 1867 में ऊपरी असम की ब्रह्मपुत्र घाटी में जॉन लबॉक द्वारा एक नवपाषाण काल की कुल्हाणी (celt) का पता चला। व्यापक खोज और उत्खनन से भारत की नवपाषाण संस्कृतियों के बारे में काफ़ी मात्रा में सामग्री प्राप्त हुई है। भारतीय नवपाषाण के बारे में एक बात ध्यान देने योग्य है कि भारत में नवपाषाण संस्कृतियाँ एक ही समय में हर जगह विकसित नहीं हुईं, न ही एक साथ समाप्त हुईं। क्षेत्रीय भिन्नताएँ भी थीं। उदाहरण के लिए, उत्तर-पूर्व में नवपाषाण युग के उपकरणों/संयंत्रों के बावजूद खेती का कोई सबूत नहीं मिला है। कश्मीर घाटी में नवपाषाणकालीन संस्कृतियाँ पूर्ववर्ती मध्य पाषाण संस्कृतियों से विकसित नहीं प्रतीत होती। उपजाए गए फसलों के संदर्भ में, बलूचिस्तान के मेहरगढ़ में गेहूं और जौ प्रमुख थे, लेकिन प्रयागराज के आसपास के मध्य क्षेत्र में चावल महत्वपूर्ण था। दक्षिण भारतीय नवपाषाण इस अर्थ में अद्वितीय है कि इसमें बाजरा की खेती के साक्ष्य के साथ राख के टीले भी मिले हैं। इस प्रकार, इन क्षेत्रीय नवपाषाण परंपराओं में से प्रत्येक को स्थानीय व पारिस्थितिक परिस्थितियों द्वारा अनुकूलित पाया गया है और इसे अलग से अध्ययन करने की आवश्यकता है। तथापि, मोटे तौर पर हम यह कह सकते हैं कि भारत का नवपाषाण काल स्थिर/अर्ध-स्थिर ग्रामीण संस्कृति का मिला जुला स्वरूप था।

अब हम नवपाषाण स्थलों के समूहों पर चर्चा करते हैं जो भारत के विभिन्न भागों में पाए जाते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप या दक्षिण एशिया के नवपाषाण स्थलों को विभिन्न क्षेत्रीय सांस्कृतिक समूहों में विभाजित किया गया है। ये हैं:

1) उत्तर-पश्चिमी भाग – अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान के क्षेत्र।
2) उत्तरी क्षेत्र – कश्मीर का क्षेत्र।
3) विंध्य की पहाड़ियाँ और गंगा घाटी– प्रयागराज, मिर्जापुर और बेलन नदी घाटी का विंध्य क्षेत्र।
4) मध्य-पूर्वी गंगा घाटी क्षेत्र – बिहार के उत्तरी भाग का क्षेत्र।
5) मध्य पूर्वी क्षेत्र – ओडिशा और बंगाल क्षेत्र के साथ छोटा नागपुर क्षेत्र को छोड़कर।
6) उत्तर-पूर्वी क्षेत्र – असम और उप-हिमालयी क्षेत्र।
7) दक्षिणी क्षेत्र – प्रायद्वीपीय भारत, मुख्यतः आंध्र, कर्नाटक और तमिलनाडु के कुछ हिस्से।

हम इन क्षेत्रीय परंपराओं की मुख्य विशेषताओं को अलग-अलग विस्तार से समझेंगे ।

4.4.1 उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति

उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति अब पाकिस्तान और अफ़ग़ानिस्तान में हैं। इस क्षेत्र में गेहूं और जौ की खेती और पशुपालन के शुरुआत के साक्ष्य मिले हैं। यह दुनिया के शुरुआती क्षेत्रों में से एक है जहाँ पशुपालन एवं पौधा रोपन आदि के संयुक्त साक्ष्य मिले हैं। मध्य एशिया की परिधि क्षेत्र में ब्रैड व्हीट (एक प्रकार का गेंहू) की खेती के प्रमाण मिले हैं। गेहूं की पैतृक प्रजातियों में से एक, *एजीलॉप ताउशी* के इस क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से प्राप्त होने के बारे में भी पता चलता है। इस प्रकार, इस क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से खेती की शुरुआत हुई।

उत्तरी अफ़ग़ानिस्तान की गुफाओं में मध्यकालीन शिकारी-संग्रहकर्ता द्वारा जंगली भेड़, बकरी आदि के शिकार के साक्ष्य मिले हैं। गेहूं की खेती मध्य एशिया और इसके आसपास के क्षेत्रों में शुरू हुई। कच्छी के मैदानी भाग शुष्क पहाड़ों और सिंधु के मैदानों के बीच स्थित हैं। बाढ़ से जमा हुए मिट्टी वाले इस क्षेत्र की छोटी घाटियाँ खेती और पशुपालन के लिए आदर्श थीं। इस क्षेत्र के महत्त्वपूर्ण नवपाषाण स्थल कच्छी मैदानों में मेहरगढ़, क्वेटा घाटी में किली गुल मुहम्मद, लोरलाई घाटी में राणा घुंडई और सुरब घाटी में अंजीरा हैं। ये सभी नवपाषाण स्थल पाकिस्तान में हैं। अन्य महत्वपूर्ण स्थल हैं – गुनलन, रहमान ढेरी, तारकाई किला और सराय खोला।

मेहरगढ़: एक अध्ययन

मेहरगढ़, बोलन नदी के तट पर, बलूचिस्तान में क्वेटा से लगभग 150 किमी दूर, कच्छी के मैदानों में स्थित एक महत्वपूर्ण स्थल है। इस स्थल में 200 हेक्टेयर का क्षेत्र शामिल है। स्थल ने पूर्व-मृदभांड नवपाषाण काल से हड़प्पा संस्कृति तक के प्रमाण दिये है।

मेहरगढ़ में नवपाषाण संस्कृति का पहला सांस्कृतिक काल 7000 से 5500 बी.सी.ई. का है। यह मिट्टी के बर्तन के उपयोग के पहले की संस्कृति है। अर्द्ध घुमंतू पशु पालक समूह इस जगह पर बसने लगे। ये लोग पॉलिश किए गए पत्थर की कुल्हाड़ियों, चक्की, विशेष आकार के छोटे-छोटे पत्थर और हड्डी के औजारों का इस्तेमाल करते थे। वे मिट्टी के बर्तनों का उपयोग नहीं करते थे, लेकिन जौ, गेहूं की खेती और भेड़, बकरी और अन्य मवेशियों का पालन करते थे। इस स्थल पर पाए जाने वाले बेर, खजूर और जुजुबे के बीज आदि, निवासियों की खाद्य वस्तुओं के इकट्ठा करने की

प्रवृति को दर्शाता हैं। बारहसिंगा, हिरण, मृग आदि की हड्डियों से संकेत मिलता है कि वे लोग जंगली जानवरों का भी शिकार करते थे।

उस समय के लोग मिट्टी से अपने घरों को बनाते थे तथा मृतकों को घरों के अंदर ही दफन करते थे। शवों के पास बकरी की लाशें और आभूषण भी रखे मिले हैं। घर का आकार 2x1.8 मीटर का होता था। घरों में पीसने के पत्थर और पथर के धारदार ब्लेड पाए गए हैं। ब्लेड्स से अस्फाल्ट (बिटूमेन) के होने का साक्ष्य मिलता है जिससे पता चलता है कि उस समय हथियारों में पत्थर के हत्थे का उपयोग होता था। स्थल से हस्तनिर्मित स्त्री की मूर्तियों को बरामद किया गया है। घर भंडारण कक्ष की तरह दिखाई देते हैं और शायद उनका उपयोग अनाज भंडारण के लिए किया जाता था। उस समय लोगों द्वारा शंख, चूना पत्थर, फ़िरोज़ा मोती, लाजवर्द और बलुआ पत्थर के गहने का इस्तेमाल करने के सबूत मिले हैं। ईरान के निशापुर खानों से फ़िरोज़ा, अफ़गानिस्तान के बदकशान से लाजवर्द और तटीय क्षेत्रों से शंख मिलने से ज्ञात होता है कि मेहरगढ़ के नवपाषाण काल के लोगों का सम्पर्क दूर तक के लोगों से था।

मेहरगढ़ की अवधि II, 6500 बी.सी.ई. से 4500 बी.सी.ई., तथा अवधि III, 4800 बी. सी.ई. से 3500 बी.सी.ई. तक मानी जाती है। 5000 बी.सी.ई. अवधि II में, कपास और अंगूर की खेती के सबूत देखे गए। इस काल में मिट्टी के बर्तनों के प्रयोग के प्रमाण हैं। टेराकोटा (पकी मिट्टी) मूर्तियों के साथ चमकदार प्रकाचित मिट्टी के मनके पाए गए हैं। महिलाओं के बीच गहनों के उपयोग सम्बंधी प्रचलन के सबूत भी मिले हैं। लाजवर्द के उपयोग से लंबी दूरी तक के व्यापार के साक्ष्य का पता चलता है। बाद में घरों के आकार में वृद्धि तथा हाथी दांत पर किए कारीगरी के काम के भी सबूत मिले हैं। इस अवधि में हँसिया का प्रयोग शुरू हो गया था। मेहरगढ़ की अवधि III में चाक से मिट्टी के बर्तनों को बनाने तथा उस पर मानव और पुष्प डिजाइनों को चित्रित किए जाने के सबूत मिले हैं। इस अवधि में कब्रगाहों की अधिक संख्या होना, जनसंख्या में वृद्धि का संकेत है। पीरियड III में भी तांबे पर काम के साक्ष्य पाए गए हैं। सिंधु सभ्यता के विकसित व समृद्ध होने के पश्चात गाँव के परित्याग करने सम्बंधी सबूत भी प्राप्त हुए हैं ।

मेहरगढ़ का महत्व

मेहरगढ की अवधि I से III में घुमंतु शिकारी-संग्रहकर्ता जीवन से लेकर पशुपालन और कृषि तक के संक्रमण के शुरुआती प्रमाण मिले हैं। लगता है कि जौ सबसे महत्वपूर्ण फसल थी। गौरतलब है कि जौ की जंगली, संक्रमणकालीन और खेती योग्य किस्में पाई गई हैं। बलूचिस्तान के उत्तरी क्षेत्र में जौ प्राकृतिक रूप से उगते थे तथा मेहरगढ़ के जौ के उत्पादन का केंद्र होने सम्बंधी साक्ष्य मिला है। इस क्षेत्र में गेहूँ उपजाने के सबूत मिले हैं। हालांकि इस क्षेत्र में गेहूं के प्राकृतिक रूप से उगने का सबूत नहीं है तथापि मेहरगढ़ के लोगों द्वारा गेहूं की खेती करने के सबूत मिले हैं। स्थल पर पशु पालन के और संक्रमण के लिए बहुत सारे सबूत हैं। अवधि के निचले स्तर में जंगली जानवरों के अवशेष मिले हैं। स्तर I काल में मवेशियों और भेड़ की हड्डियों के घटते आकार से संकेत मिलता है कि पशुपालन पर ज़ोर दिया जाने लगा था। अवधि I के अंत तक, जंगली जानवरों की हड्डियां कम हो गईं, जबकि पालतू मवेशियों, भेड़ और बकरी की हड्डियों में वृद्धि हुई। स्तर III की अवधि में, भेड़, बकरी की हड्डियां आदि की संख्या में वृद्धि पायी गयी।

मेहरगढ़ का स्थल महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें मवेशियों, भेड़, बकरी आदि पशुओं को पाला जाने लगा तथा गेहूं और जौ की खेती का शुभारम्भ हुआ जो दुनिया में अपनी तरह का पहला सबूत है।

किली गुल मुहम्मद

किली गुल मुहम्मद का नवपाषाण स्थल पाकिस्तान की क्वेटा घाटी में है। इस स्थल से तीन सांस्कृतिक काल का पता चला है। इस स्थल की नवपाषाण बसावट 5500 बी.सी.ई. से 4500 बी.सी.ई. तक की हैं जो मेहरगढ़ के बाद के माने जाते हैं। यहाँ के लोगों द्वारा छप्पर वाले और मिट्टी से घर बनाने के सबूत मिले हैं। उन्होंने गाय, भेड़ और बकरी को पालतू बनाया। मेहरगढ़ के समान ही चित्रित डिजाइनों के साथ टोकरी चिह्नित मिट्टी के बर्तनों, लाल मिट्टी से बने बर्तनों को काले रंग से रंगने आदि काम के सबूत चरण II और III में पाए जाते हैं। इस स्थल पर खानाबदोश पशुपालकों के होने के भी सबूत मिले हैं। इस स्थल से सूक्ष्म पाषाण उपकरण भी बरामद किए गए हैं।

4.4.2 उत्तरी क्षेत्र (कश्मीर) की नवपाषाण संस्कृति

उत्तरी नवपाषाण संस्कृति के स्थल कश्मीर में पाए जाते हैं। कश्मीर क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति हड़प्पा सभ्यता के समकालीन थी। हालिया शोध ने इस क्षेत्र में नवपाषाण संस्कृति की शुरुआत को चौथी सहस्राब्दि के उत्तरार्द्ध के आसपास रखा है। बुर्ज़ाहोम, गुफक्राल और कानिसपुर में उत्खनन से नवपाषाण संस्कृति से संबंधित महत्वपूर्ण सामग्री का पता चला। बुर्जाहोम और गुफक्राल ने महापाषाण युग और प्रारंभिक ऐतिहासिक चरणों के बारे में भी खुलासा किया है।

बुर्ज़ाहोम

बुर्ज़ाहोम इस संस्कृति का एक महत्वपूर्ण स्थल था। इस स्थल पर दो सांस्कृतिक अवधियों की पहचान की गई है। नवपाषाण काल में, लोग कश्मीर क्षेत्र के अत्यधिक ठंडे मौसम से बचने के लिए गड्ढे वाले घरों (भूमिगत आवास, लगभग 4 मीटर गहराई) में रहते थे। गर्त घर आकार में अंडाकर थे, और वे नीचे की तरफ़ चौड़ें थे और ऊपर की तरफ़ संकरे थे। गडढे वाले घरों के चारों ओर एक छत संरचना के निर्माण के लिए उपयोग किए जाने वाले स्तंभ छेद पाए गए हैं। घरों के भीतर सीढ़ी से जाया जाता था। उन्होंने मोटे हस्तनिर्मित मिट्टी के बर्तनों को बनाना शुरू किया। निवास स्थान के पास भंडारन के लिए गड्ढे पाए गए। लोग पत्थर की कुल्हाड़ियों, छेनी, फरसा, मूसल, कुदाली आदि जैसे उपकरणों का उपयोग किया करते थे। उन्होंने जानवरों की खाल पर काम करने के लिए खुरचनी का इस्तेमाल किया। ठंड से बचने के लिए जानवरों के खाल को सुए से सिलके कपड़ों के रूप में .उपयोग किया जाता था। हड्डियों से बनी बर्छी, सुई और तीर का उपयोग किया जाता था। पत्थर पर शिकार का दृश्य तथा सूर्य और कुत्ते का चित्रण भी पाया गया है। ये लोग शिकार करने, मछली पकड़ने और सीमित कृषि कार्य करते थे। यहाँ अनाज भण्डारण के साक्ष्य भी मिले हैं। बुर्ज़ाहोम में एक छिद्रित अनाज काटने का उपकरण भी मिला है। काल II में गोमेद और इंद्रगोप के मनके तथा कोटडीजी चरण के बर्तन में एक सींग वाले देवता को एक महत्वपूर्ण खोज के रूप में दिखाया गया है। इस स्थल के कब्रगाह से जंगली कुत्ते की हड्डी और बारहसिंहे के सींग भी प्राप्त हुए हैं। इस क्षेत्र से गेहूं (*ट्रिटिकम एसपी*।), जौ (*होर्डियम वल्गारे*), आम मटर (*पाईसम अरविन्से एल*) और दाल (*लेंस क्युलारिस*) आदि बरामद किए गए हैं। पालतू जानवरों में भेड़, बकरी, सुअर, कुत्ता आदि शामिल हैं। लाल हिरण, कश्मीरी हिरण, इबेक्स, भालू और भेड़िया की जंगली जानवरों की हड्डियाँ मिली हैं जिससे पता चलता है कि वे लोग निर्वाह हेतु इन जंगली जानवरों का शिकार भी करते थे।

गुफक्राल के स्थल में तीन सांस्कृतिक चरणों के प्रमाण हैं। 3000 बी.सी.ई के आसपास इस स्थल पर लोगों ने बसना शुरू कर दिया था और उनके गड्ढों में रहने के प्रमाण मिले हैं। भेड़, बकरी, हिरण, बारहसिंगा, भेड़िया और भालू की हड्डियाँ बरामद हुयी हैं जिससे पता चलता है कि लोग पशु-पालन और अपने निर्वाह के लिए शिकार पर निर्भर थे। पॉलिश पत्थर के उपकरण, चक्की, सींग के उपकरण और शैलखटी मनकें से उनकी भौतिक संस्कृति के बारे में जानकारी मिलती है। यह स्थल 1300 बी.सी.ई. का माना गया है। माना जाता है कि कश्मीर की नवपाषाण संस्कृति का पूर्व-एशियाई नवपाषाण संस्कृति के यांग शाओ चरण के साथ संबंध था। कश्मीर घाटी में मिले छिद्रण वाले स्टोन नाइफ-हार्वेस्टर की, उत्तर और मध्य चीन के यांग शाओ और लुंग शान समूह तथा जापान व कोरिया के जोमन आदि के साथ समानताएं हैं। कश्मीर नवपाषाण में कुछ विशिष्ट विशेषताएं हैं जैसे कि गड्ढे में रहना, फसल काटने के औजारों का उपयोग, जानवरों के सिंग व हड्डी के उपकरण, कुत्ते के दफनाने और शवों पर लाल गेरू के उपयोग आदि।

4.4.3 विंध्य पहाड़ियों की नवपाषाण संस्कृति, बेलन व गंगा नदी की घाटियाँ

भारत में सबसे पहले नवपाषाण की बसावट बेलन नदी घाटी में मानी जाती है। यह नदी विंध्य एवं कैमूर पर्वतों के उत्तरी भागों में बहती थी। यह नदी टोंस नदी की एक सहायक नदी है जो प्रयागराज (उ.प्र) के पास गंगा में मिलती है। चूंकि यह मौनसून क्षेत्र में आता है इसलिए यहाँ का वातावरण समृद्ध व हरा भरा है। इसमें कई जंगली जानवर और जंगली चावल की प्रजातियां पायी जाती थीं। भोजन-संग्रह से खाद्य उत्पादन तक का संक्रमण के सबूत इस क्षेत्र में पाए गए। चोपनी-मांडो, कोल्डिहवा, लेहुरादेव और गंगा घाटी के महागरा इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण उत्खनन स्थल हैं। इन स्थलों से घास व जंगली पत्तों व मिट्टी से पुते घर, स्तंभ छेद, सूक्ष्म पाषाण से निर्मित उपकरण, चक्की, मूसल और हाथ से बने मिट्टी के पात्र आदि के प्रमाण मिले हैं। मुख्य सामग्री के रूप में डोरीदार या विकसित डोरीदार पात्र आते हैं जिसमें कटोरे और भंडारन जार शामिल हैं। लोग खेती और पशुपालन के काम में लगे थे। मवेशी, भेड़, बकरी, हिरण, कछुए और मछली भी बरामद हुए हैं। महागरा में घरेलू चावल के उपयोग के प्रमाण मिले हैं। यह जले हुए अनाज के रूप में मिले हैं और मृदभांडों में चावल की भूसी सन्निहित मिली है।

मध्य भारत के नवपाषाण स्थलों में चावल की खेती के साक्ष्य विवादों में घिरे हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि कोल्डिहवा का यह साक्ष्य कालानुक्रम के संदर्भ में चीन के समान है जबकि दूसरों का मानना है कि इन तारीखों की फिर से जांच करने की आवश्यकता है। एक संभावना के रूप में सुझाव दिया गया है कि चावल की खेती दक्षिण चीन से मध्य भारत में आयी हो सकती है। हालाँकि, कुछ लोगों का तर्क है कि मध्य भारत चावल की खेती का एक स्वतंत्र केंद्र था।

4.4.4 मध्य-पूर्वी गंगा घाटी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति

चिरंद (सारन जिले में घाघरा नदी के तट पर), चेचर, सेनुवर (ससाराम के पास) और तारादीप में लगभग 2000 बी.सी.ई. से लोगों के निवास करने के सबूत मिले हैं। सेनुवर में खेती कर उपजाए गए चावल, जौ, मटर (*पाईसम सटाईवम*), मसूर और बाजरा के उत्पादन के सबूत मिले हैं। चिरंद के स्थल से मिट्टी के फर्श, मिट्टी के बर्तनों, सूक्ष्म पाषाण से निर्मित वस्तुएँ, पॉलिश की गयी पत्थर की कुल्हाड़ियों और पक्की मिट्टी से निर्मित मानव मूर्तियों के

सबूत प्राप्त हुए हैं। इन स्थलों पर हड्डियों से निर्मित उपकरण भी पाए गए हैं। चिरंद में लोग मिट्टी से बने दीवारों व घास व जंगली पत्तों से निर्मित छत वाले गोलाकार और अर्धवृत्ताकार घरों में रहते थे तथा स्तंभ छेदे के भी सबूत मिले हैं। इस स्थल से चावल, गेहूं, जौ, मूंग और मसूर के पौधों के अवशेष बरामद किए गए हैं। शायद दो-दो फसल उगाने की प्रथा मौजूद थी। इस क्षेत्र में पक्की मिट्टी से बने कूबड़ वाले बैल, पक्षियों, और सांप की मूर्तियों तथा चूड़ियाँ और मनके व पत्थर फेंकने के हथियार के प्रयोग का पता चलता है।

इस क्षेत्र के नवपाषाण स्थलों सोहगौरा, इमलीडीह खुर्द, चिरंद, चेचर और सेनुवार से प्राप्त वस्तुएँ ताम्र पाषाण युग के संक्रमण के प्रमाण भी हैं। ऐसा लगता है कि इस क्षेत्र में तीसरी सहस्राब्दी बी.सी.ई. के दूसरे अद्धांश में तांबे की शुरुआत हुई थी।

4.4.5 मध्य-पूर्वी भारत की नवपाषाण संस्कृति

नवपाषाण स्थल पश्चिम बंगाल और ओडिशा के क्षेत्र में कई स्थानों पर पाए जाते हैं। बीरभनपुर इस क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण नवपाषाण स्थल है। पूर्वी भारतीय नवपाषाण स्थलों में कंधों वाली कुल्हाड़ियों, नुकीले बट वाली कुल्हाड़ियां और छेनी के प्रमाण हैं। कुचाई, गोलबाइसन और शंकरजंग आदि इस क्षेत्र के कुछ महत्वपूर्ण नवपाषाण स्थल हैं। ये संस्कृतियां पूर्व और दक्षिण-पूर्व एशिया के नवपाषाण परिसरों के समान दिखती हैं। इस क्षेत्र से गदा, लोढा, मूसल, मोटे लाल बर्तन, डोरीदार मिट्टी के बर्तन, फर्श, स्तंभ छेद और हड्डियाँ मिली हैं। पांडु राजार ढिबी क्षेत्र में नवपाषाण संस्कृति मध्य पाषाण संस्कृति से विकसित हुयी हैं।

4.4.6 पूर्वोत्तर भारत की नवपाषाण संस्कृति

असम और उत्तरी चच्छर की पहाड़ियाँ, तथा गारो और नागा पहाड़ियाँ उच्च वर्षा वाले क्षेत्र हैं। मरकडोला, दाओजली हडिंग और सरुटारू असम क्षेत्र के नवपाषाण स्थल हैं। यहाँ आमतौर पर कंधे वाली कुल्हाड़िया, गोलाकार कुल्हाड़ियाँ और डोरी या बेलचा मुद्रित मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए हैं। उत्तर-पूर्वी भारत में, नवपाषाण संस्कृति थोड़ी बाद की अवधि की है। इस क्षेत्र में झूम खेती, रतालू और यम (एक प्रकार का तना रहित फल) की खेती, मृतकों के लिए पत्थर और लकड़ी के स्मारक बनाने और ऑस्ट्रो-एशियाई भाषाओं की उपस्थिति के प्रमाण हैं। यह क्षेत्र दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ सांस्कृतिक समानता को दर्शाता है।

4.4.7 दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृति

दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृतियाँ मुख्यतः आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु के उत्तर-पश्चिमी भाग में पाई जाती हैं। कूपगल, बुदिहल, कोडेकल, कुड़ातिनी, संगनकल्लू, टी. नरसीपुर, और ब्रह्मगिरि दक्षिण भारत के नवपाषाण स्थल हैं। तमिलनाडु में पइय्यमपल्ली के स्थल से नवपाषाण संस्कृति के प्रमाण मिले हैं। दक्षिण भारत के नवपाषाण समूह के रूप में 200 से अधिक नवपाषाण स्थलों की पहचान की गई है। ये स्थल पानी के स्रोतों के साथ ग्रेनाइट पहाड़ियों के पास पाए जाते हैं। ये गोदावरी, कृष्णा, पेन्नेरु, तुंगभद्रा और कावेरी नदियों की घाटियों में पाए जाते हैं। कर्नाटक में संगनकल्लू, कोडेकल, बुदिहल, टेकलकोटा, ब्रह्मगिरी, मस्की, टी. नरसीपुर, पिकलिहल, वटकल, हैमीज, हलूर, उत्नूर, पल्लवॉय, नागार्जुनकोंडा, रामपुरम और वीरपुरम तथा तमिलनाडु में पय्यमपल्ली उल्लेखनीय स्थल हैं।

कुछ शुरुआती नवपाषाण स्थलों में राख के टीले मिले हैं। गाय के गोबर को समय-समय पर जलाया जाता था। हो सकता है कि इन स्थलों पर पशुपालकों का आवास हो और गाय के गोबर को समय-समय पर विभिन्न कारणों से जलाया जाता हो। आंध्र प्रदेश के उत्नूर

और पल्लवॉय; कर्नाटक में कोडेकल, कूप्गल और बुदिहल में राख के टीले मिले हैं। गोबर को बार-बार जलाया जाता था जिससे यह काचित (काच के समान) हो जाता था और ज्वालामुखी की राख की तरह दिखता है। नरम राख और विघटित गोबर की परतें भी देखी गयी हैं। राख के टीले के आसपास घरों और कब्रगाहों के प्रमाण मिले हैं। वे लोग मृत लोगों को घरों के भीतर दफन कर दिया करते थे।

राख के टीले

दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृति भारत की क्षेत्रीय नवपाषाण परंपराओं में सबसे व्यापक है। इसमें कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु शामिल हैं। यद्यपि राख के टीले की कुछ विशेषताएँ हैं तथापि यह दक्षिण भारतीय नवपाषाण स्थलों की एक समस्या भी है। उत्तरी कर्नाटक के बेल्लारी, रायचूर, बीजापुर, गुलबर्गा और बेलगाम तथा आंध्र प्रदेश के रायलसीमा क्षेत्र के अनंतपुर, करनूल, महबूबनगर जिलों को मिलाकर दक्षिणी डेक्कन में सौ से अधिक ऐसे स्थलों की खोज की गई है।

प्रोफेसर के. पदैय्या द्वारा उत्तरी कर्नाटक के बुदिहाल (Budihal) के राख के टीले के स्थल पर की गई विस्तृत जांच से पता चला है कि राख के टीले नियमित, नवपाषाण ग्रामीण बस्तियों में पाए जाते थे। यह अर्ध-शुष्क जलवायु परिस्थितियों व पहाड़ी इलाकों में **खाद्य उत्पादन** करने वाले समुदायों के अनुकूलन/आत्मसात (adaptation) करने का एक उदाहरण है, जो पौधों की खेती के लिए उपयुक्त नहीं थे। राख के टीलों के संबंध में कई व्याख्याएं प्रस्तुत की गई हैं। शुरुआत में लोगों ने स्थानीय किंवदंतियों को अपनी व्याख्याओं का आधार बनाया जिसके तहत वे इन राख के टीलों को *महाभारत* के राक्षसों के दाह संस्कार के साक्ष्य के रूप में मानते थे। दूसरे दृष्टिकोण ने उन्हें कंकर-पत्थर या ज्वालामुखीय राख के भूवैज्ञानिक जमावड़े के रूप में माना। मध्ययुगीन काल में एक अन्य विचार के तहत विजयनगर साम्राज्य और दिल्ली सल्तनत के बीच युद्धों में अपने पति को खो देने वाली महिलाओं द्वारा किए गए सामूहिक सती के भौतिक अवशेषों के रूप में बताया गया है। एक अन्य विचार के तहत इसे लोहे और सोने को गलाने, ईंट बनाने, मिट्टी के बर्तन बनाने आदि जैसी औद्योगिक गतिविधियों से संबंधित जमी राख के रूप में स्वीकार किया जाता है। रॉबर्ट ब्रूस फुट ने बस्तियों में इन राख के टीलों को नवपाषाण काल से संबंधित पाया और इसे नवपाषाण काल की गतिविधि के रूप में उद्धृत किया। 1960 के दशक में महबूबनगर जिले के उत्नूर (Utnoor) में एफ़. आर. ऑल्चिन द्वारा खुदाई ने फुट के निष्कर्षों की पुष्टि की। हालाँकि, उनका मानना था कि वे गाय के रहने के स्थल हैं, और वह उन्हें मानव के रहने के स्थलों से अलग मानते हैं। उनका निष्कर्ष मवेशियों के खुर के छापों और उत्नूर में पाए गए पशु बाड़े की तैयारी के साक्ष्य पर आधारित है। उन्होंने तर्क दिया कि राख के टीले कई चरणों में बने थे। प्रत्येक के निर्माण के दौरान सतह को समतल किया जाता था, लकड़ी के बाड़े बनाए जाते थे, मवेशियों को दाना डाला जाता था तथा गाय के गोबर को एकत्र कर जला दिया जाता था। फुट द्वारा प्रस्तुत दावे से अलग, गोबर को गलती से नहीं बल्कि जानबूझकर जलाया जाता था। यह नवपाषाण काल के अग्नि के उपयोग का हिस्सा था, जो मवेशियों की प्रजनन क्षमता को बढ़ावा देने के लिए किया जाता था।

बुदिहाल के स्थल पर व्यापक क्षैतिज उत्खनन के आधार पर प्रोफेसर के. पदैय्या ने ऑल्चिन द्वारा राख के टीलों वाले स्थलों को लोगों के स्थायी निवास स्थल के रूप में व्यक्त किए गए विचारों से असहमति जतायी है। उन्होंने महसूस किया कि वे वास्तव में पशुपालन वाले क्षेत्र थे और राख के टीलों को सांस्कृतिक महत्व रखने वाली पूर्ण

बस्तियों के रूप में माना जाना चाहिए। उनकी जांच से पता चला कि बुदिहाल जैसे राख के टीले इस क्षेत्र के छोटे स्थलों की तुलना में बड़े और विशिष्ट थे। बुदिहाल संभवतः वर्तमान के मवेशियों के मेलों के समान एक मंडलीय केंद्र के रूप में कार्य कर रहा था। यहां महत्वपूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक लेनदेन होते रहे होंगे। स्थल पर पाई गई व्यापक चमकदार कर्मशाला के अवशेषों से पता चलता है कि उस समय बिल्लौर की बनी चमकदार वस्तुएँ, पत्थर के धारदार औज़ार आदि का आदान-प्रदान या कारोबार किया जाता था।

स्रोतः के. पदैय्या, 2001

दक्षिण भारत के नवपाषाणकालीन लोगों की कृषि आधारित ग्रामीण अर्थव्यवस्था थी। वे मवेशियों (*Bos indicus*), भैंस (*Bubalus bubalis*), भेड़ (*Ovis aries*), बकरी (*Capra hircusaegagrus*), सुअर (*Sus scrofacristatus*), कुत्ते (*Canis familiaris*) और उल्लू (*Gallus sp.*) को पालते थे। मवेशी उनकी अर्थव्यवस्था का मुख्य स्रोत थे। पक्की मिट्टी से बनी मवेशियों की मूर्तियाँ भी मिली हैं।

नवपाषाण काल के लोग मुख्य रूप से बाजरा, दालें और फलियां उगाते थे। बाजरा (*Eleusine coracana*), कोदो बाजरा (*Paspalum scrobiculatum*), काबुली चना (*Dolichos biflorus*), हरा चना (*Vigna radiata*), काला चना (*Phaseolus mungo*) और जलकुंभी बीन (*Dolichos lablab*) की खेती के प्रमाण मौजूद हैं। कुछ स्थलों पर जौ (*Hordeum vulgare*) और चावल (*Oryza sativa*) भी पाए गए हैं।

नवपाषाण काल के लोगों ने मुख्य रूप से पॉलिश की गई पत्थर की कुल्हाड़ियों, पत्थर से बने ब्लेडों, चाकुओं, गँडासों, खुरचनियों और अन्य उपकरणों का उपयोग किया। तांबे और कांस्य के पुरावशेष बाद के काल में पाए जाते थे। वे अनाज को पीसने के लिए चक्की का उपयोग करते थे, फूस के घरों का निर्माण करते थे और धूल के रंग (Grey) व भूरे रंग के हस्तनिर्मित, पके हुए बर्तनों का इस्तेमाल करते थे। मिट्टी के बर्तनों में से कुछ पर चित्र बने होते थे, किंतु इनकी संख्या कम थी ।

बुदिहल (हुंस्गी घाटी) स्थल कर्नाटक में है। राख के टीले वाली जगह पर मृत बालकों को दफन करने, मवेशियों को काटने और मृतकों को दफनाने के सबूत मिले हैं। जल संचयन के साक्ष्य भी मिले हैं।

4.5 सामाजिक संगठन और आस्था प्रणाली

नवपाषाण काल के लोगों के सामाजिक संगठन को समझने के प्रमाण बहुत सीमित हैं। लोग स्थानबद्ध और अर्ध-स्थानबद्ध बस्तियों में रहने लगे थे। उनका सामाजिक संगठन शायद जनजाति स्तर का था। भूमि और पौधों के स्वामित्व का विचार उभरा, क्योंकि उन्होंने पौधों को उगाने और जानवरों को पालतू बनाना शुरू किया। छोटे गोदामों की उपस्थिति छोटे परिवारों के अस्तित्व को दर्शाती है। चीनी मिट्टी की वस्तुएँ (Ceramics) और मोती की बनी सामग्री भौतिक, सांस्कृतिक उत्पादन में सुधार को दर्शाते हैं। लोगों ने कुछ क्षेत्रों का सीमांकन किया था। मृतकों को घरों में दफनाया गया था और कभी-कभी जानवरों के दफन के भी सबूत मिले हैं। उस समय के लोगों द्वारा कुछ कर्मकांडों को अपनाने और मृतकों की पूजा करने के बारे में भी पता चलता है। उस समय प्राकृतिक शक्तियों की पूजा की जाती होगी। कला वस्तुओं का साक्ष्य सीमित है तथा पक्की मिट्टी (Terracotta) से बनी मवेशियों की मूर्तियों से ज़मीन के उर्वरक होने के बारे में पता चलता है।

बोध प्रश्न 2

1) सही उत्तर के लिए (✓) व गलत उत्तर के लिए (✗) का चिहन लगाएं:

   क) बुर्जहोम में गर्त भवनों (Pit houses) के सबूत हैं। ( )

   ख) मेहरगढ़ विश्व में जानवरों और पौधों के वर्चस्व के स्वतंत्र केंद्रों में से एक हो सकता है। ( )

   ग) कश्मीर के नवपाषाण स्थल पश्चिम एशिया और चीन के नवपाषाण स्थलों के साथ संपर्क के संभावित सबूत दिखाते हैं। ( )

   घ) दक्षिण भारतीय नवपाषाण स्थलों में आस-पास की चट्टानों पर खरोचें और घरों के भीतर मृत मानव को दफनाने के साक्ष्य हैं। ( )

   ड़) कंधों वाली कुल्हाड़ी (Shouldered Celt) दक्षिण-पूर्व एशियाई सामग्रियों से मिलती जुलती है। ( )

   च) उत्तर-पूर्वी भारतीय नवपाषाण स्थल दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ संपर्क का कोई सबूत नहीं दिखाते हैं। ( )

   छ) डोरी से चिह्नित (Cord marked) मृदभांड विंध्य-गंगा घाटी के नवपाषाण स्थलों की एक विशेषता है और चावल के प्रमाण भी यहां नहीं मिलते हैं। ( )

2) रिक्त स्थान भरें

   क) नवपाषाण संस्कृतियों ने दुनिया के कुछ हिस्सों में कृषि और पशुपालन का ..... (क्रमिक, अचानक) विकास देखा।

   ख) पौधा रोपण का सबसे पहला साक्ष्य ..... (शिखांत-पुरापाााण/ताम्रपाषाण) संस्कृतियों में .....(इज़राइल, पाकिस्तान) के आसपास के क्षेत्रों में पाया जाता है।

   ग) एक विचारधारा, जो संस्कृति के अनुकूलन की धारणा के विरुद्ध है, का तर्क है कि दक्षिण-पश्चिमी एशिया में जीवन पूर्व-नवपाषाण काल में शुरू हुआ जो .... (सांस्कृतिक/पर्यावरणीय कारणों) को दर्शाता है, जो नवपाषाण विकास में प्रमुख भूमिका निभा रहे थे।

   घ) शतालहुयुक (Catalyayuk) और जारमो (Jarmo) क्रमशः ..... (तुर्की/ईरान) और ..... (इराक/सीरिया) में हैं।

4.6 सारांश

इस इकाई में नवपाषाण संस्कृतियों की परिभाषा, प्रकृति और विशेषताओं के बारे में विवरण प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में, घुमंतु शिकारी जीवन से खाद्य-उत्पादन तक का संक्रमण सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण बदलाव लाया। प्रारंभिक भारतीय गांवों की नींव नवपाषाण काल में रखी गई थी। भारत ने विभिन्न भागों में नवपाषाण संस्कृतियों को देखा। मेहरगढ़ में भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी भाग की नवपाषाण संस्कृति की विशेषताओं, जैसे पौधा रोपण और पशुपालन, के शुरुआती प्रमाण मिले हैं। कश्मीर के नवपाषाण स्थलों में गड्ढों में घर बने होने के प्रमाण हैं। ये स्थल हड़प्पा स्थलों और पूर्वी तथा पश्चिम एशिया की संस्कृतियों के साथ संपर्क को दर्शाती है। बेलन घाटी के नवपाषाण स्थलों में डोरी से चित्रित मृदभांड मिले हैं और घुमंतु शिकारी जीवन से लेकर कृषि तक के संक्रमण के प्रमाण मिले हैं। विंध्य की पहाड़ियों और मध्य गंगा घाटी के स्थल बाद के हैं

तथा पौधा रोपण और पशुपालन का प्रमाण दर्शाते हैं। पूर्वी और उत्तर-पूर्वी भारत के स्थल दक्षिण-पूर्व एशिया में अक्सर कंधे वाली कुल्हाड़ियों (Shoudered Celts) को दर्शाते हैं। इन स्थलों पर पेड़ों की पत्तियों से चित्रित मृदभांडों के पाए जाने के सबूत मिले हैं। दक्षिण भारत के नवपाषाण स्थलों में शुरुआती चरणों में राख के टीले मिले हैं और पौधा रोपण और पशुपालन के प्रमाण भी मिले हैं।

4.7 शब्दावली

AMSL : Above Mean Sea Level (औसतन समुद्र स्तर के उपर)।

शिखांत पुरापाषाण (Epi-Palaeolithic) काल : यह पुरा पाषाण काल की समाप्ति को संदर्भित करता है।

अभिनूतन (Holocene)युग : आधुनिक युग जिसकी शुरुआत 11,500 वर्ष पहले हुई।

शिकार-भोजन संग्रहण (Hunting-Gathering) : जीवन निर्वाह की एक विधा। जानवरों, पक्षियों, मोलस्कों (Molluscs) और मछलियों का शिकार करना तथा फल, अखरोट, पत्तियाँ, डंठल और जड़ों जैसे पौधों के खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करने का कार्य।

घुमंतु : एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना।

OSL तिथि-निर्धारण : Optically Stimulated Luminescence Dating (प्रकाशीय संदीप्ति चमक प्रणाली से पदार्थों की उम्र का निर्धारण)।

प्रातिनूतन काल : चार युगों में पहला युग। यह अभिनूतन युग (Holocene) के पहले व अतिनूतन युग (Pliocene) के बाद का काल था।

आद्य-नवपाषाण (Proto-Neolithic) काल : संस्कृतियां जो नवपाषाण काल से पहले थीं।

गतिरहित जीवन शैली (Sedentism) : यह एक स्थान पर लोगों के स्थायी निवास को दर्शाता है, जो एक विशिष्ट स्थान पर लंबे समय तक निवास करते हैं।

अर्ध-स्थायी (Semi-Sedentary) : वर्ष के एक विशिष्ट मौसम में एक स्थल पर रहने वाले प्रवासी समुदाय।

झूम कृषि (Shifting Cultivation) : खेती के लिए जंगल को जलाकर भूखंड का निर्माण तथा एक मौसम के बाद अगले भूखंड में कृषि को स्थानांतरित करने की प्रक्रिया।

Wattle-and-Daub (लकड़ी से बना व मिट्टी से पुता घर) : एक प्रकार का घर जिसकी दीवारें लकड़ी के तख्ते से बनी और मिट्टी से पुती होती थीं। इन दीवारों के निशान तभी पाए जाते हैं जब लकड़ी के तख्ते गलती से जल जाते हैं। नवपाषाण स्थलों में ऐसे घरों के अवशेष पाए गए हैं।

हिम युग : हिम युग की शुरुआत लगभग 26 लाख वर्ष पहले हुई जब प्रातिनूतन (Pleistocene) युग की शुरुआत हुई। यह प्रातिनूतन युग के साथ समाप्त हुआ।

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) उप-भाग 4.3.1 देखें।

2) उप-भाग 4.3.2 देखें।

बोध प्रश्न-2

3) क) ✓ ख) ✓ ग) ✓ घ) ✓ ड़) ×
च) × छ) ✓

4) क) क्रमिक, ख) शिखांत पुरापाषाण, इज़राइल, ग) सांस्कृतिक, घ) तुर्की, इराक

4.9 संदर्भ ग्रंथ

ऑल्चिन, ब्रिजेट और रेमंड (1989). *द राइज़ ऑफ सिविलाइज़ेशन इन इंडिया एंड पाकिस्तान.* दिल्लीः सेलेक्ट बुक सर्विस सिंडीकेट ।

चक्रवर्ती, डी. के. (2006). *द ऑक्सफ़ोर्ड कम्पैनियन टू इंडियन आर्कियोलोजीः द आर्कियोलॉजिकल फ़ाउंडेशन्स ऑफ़ एंशिएंट इंडिया.* ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

पदैय्या, के. (1973). *इनवैस्टीगेशन्स इंटू द नियोलिथिक कल्चर ऑफ द शोरापुर दोआब, साउथ इंडिया.* लाइडेनः ब्रिल।

संकलिया, एच. डी. (1974): *प्रीहिस्ट्री एंड प्रोटोहिस्ट्री इन इंडिया एंड पाकिस्तान.* पुणेः डेक्कन कॉलेज.

सिंह, उपिंदर (2008). *ए हिस्ट्री ऑफ एंशियंट एंड अर्ली मेडीवल इंडिया: फ्रॉम द स्टोन एज टू द ट्वैल्फ्थ सेंचुरी.* दिल्लीः पीयरसन और लॉन्गमैन।

वेब संसाधन

http://www.sciencemag.org/news/2017/06/carved-human-skulls-found-ancient-stone-temple

10.1146/annurev.anthro.31.040402.085416.

Doi: 10.1007/s10963-006-9006-8

Doi: http://antiquity.ac.uk/ant/084/ant0840621.htm

Doi: http://www.homepages.ucl.ac.uk/~tcrndfu/web_project/arch_back.html

Doi: https://doi.org/10.1080/02666030.1998.9628556

इकाई 5 हड़प्पा सभ्यता-I*

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 खोज

5.3 नामावली व विस्तार क्षेत्र

5.4 काल क्रम

5.5 उत्पत्ति के विषय में वाद-विवाद

5.6 प्रारम्भिक हड़प्पा क्या है?

5.6.1 प्रारंम्भिक हड़प्पा की संस्कृतियाँ

5.6.2 कुछ महत्वपूर्ण अवलोकन

5.7 सारांश

5.8 शब्दावली

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.10 संदर्भ ग्रंथ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई में, हम हड़प्पा सभ्यता के रचनात्मक चरण को समझने जा रहे हैं। हम उन विभिन्न संस्कृतियों पर ध्यान केन्द्रित करेंगे, जिससे इस सभ्यता की नीवं पड़ी, साथ ही साथ हम उन कारकों के बारे में वाद-विवादों का भी अध्ययन करेंगे जिसके कारण परिपक्व हड़प्पा चरण का विकास हुआ। आप इस इकाई के पढ़ने के बाद निम्न विषयों को जानने में सक्षम होंगे :

- हड़प्पा सभ्यता की खोज;
- प्रारंभिक हड़प्पा संस्कृति की मुख्य विशेषताओं की पहचान;
- हड़प्पा सभ्यता के विस्तार व भौगोलिक प्रसार से जुड़ी जानकारी;
- हड़प्पा सभ्यता के उद्‌भव के विषय में विद्वानों के मत;
- विभिन्न क्षेत्रीय प्रारम्भिक हड़प्पा संस्कृतियों के विषय में ज्ञान; तथा
- प्रारम्भिक हड़प्पा से परिपक्व हड़प्पा तक का संक्रमण काल के विषय में जानकारी।

5.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम भारत के प्रथम शहरी सभ्यता का अध्ययन करेंगे, वह हैः सिंधु अथवा हड़प्पा सभ्यता। इसके पहली इकाइयों में आपने प्रथम कृषक संस्कृतियों के उदय का भारतीय उपमहाद्वीप – विशेषरूप से ब्लूचिस्तान व उत्तर प्रदेश क्षेत्र के संदर्भ में अध्ययन किया। इस प्रकार, मानव शिकारी-संग्रहकर्ता से खाद्य उत्पादक हो गया; जिसे नवपाषाण-

* डॉ. आवंतिका शर्मा, इन्द्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

काल क्रांति के नाम से समझा जा सकता है। मानव विकास के अगले चरण में शहरों का विकास या नगरीकरण था। ये बस्तियाँ (आवास-स्थल) गाँवों से अलग थी और यह सत्ता के केन्द्र या द्वितीयक आर्थिक क्रियाकलापों से जुड़ी हुयी थी जैसे व्यापार, हस्तशिल्प, कला आदि। वे अधिक परिष्कृत सभ्यता व जीवन निर्वाहन के उदय को चिन्हित करते हैं।

5.2 खोज

सन् 1924 में जॉन मार्शल ने दुनिया को एक प्राचीन सभ्यता अर्थात् सिंधु घाटी सभ्यता के अस्तित्व के विषय में बताया। सिहांवलोकन से यह ज्ञात होता है कि वह प्रथम व्यक्ति नहीं थे जिनको इस सभ्यता से जुड़ी सामग्री मिली। चार्ल्स मेसन वह प्रथम व्यक्ति थे जिसने इसकी पहचान एक प्राचीन शहर, 'संगल' से की – जो सिकंदर के काल से जुड़ा था। 1853-1854 में एलेक्जेडर कनिंघम ने खंडहरों का दौरा किया और उन्होंने गलती से निष्कर्ष निकाला कि वह एक बौद्ध मठ था। उन्हें इस सभ्यता से जुड़ी मुहरें भी प्राप्त हुई, किंतु उसने इन मुहरों को विदेशी मूल का ही मान लिया क्योंकि इन मुहरों में बिना कूबड़ वाले बैल का चित्रण था, इसलिये वे भारतीय नहीं थी। अवशेषों के वास्तविक महत्व का पता चलने के लिए 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ की खुदाई की प्रतीक्षा करनी पड़ी। सन् 1920 में हड़प्पा की खुदाई दया राम साहनी व मोहनजोढ़ड़ो की राखलदास बनर्जी ने 1921 में की। दोनों स्थलों की प्राचीन कलाकृतियों की समानताएं सर जान मार्शल ने देखी, व उन्होंने 1924 में दुनिया को यह बताया कि उपमहाद्वीप में सबसे पुरानी सभ्यता की खोज हो गयी है।

5.3 नामावली व विस्तार क्षेत्र

इस खोज के आरम्भ के वर्षों में इसे सिंधु घाटी सभ्यता के रूप में जाना गया। ऐसा इसलिए था क्योंकि अधिकांश स्थल जैसे मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, अल्हादीनों, चन्हूदड़ों, सिंधु घाटी में ही खोजे गये। 1947 के बाद, भारतीय पुरातत्वविदों ने कुछ स्थल भारत में खोजें जैसे : लोथल, सुरकोटड़ा, धौलावीरा गुजरात में, कालीबंगन राजस्थान में, बनावली व राखीगढ़ी हरियाणा में। कुछ स्थल जैसे शौर्तुघई अफ़ग़ानिस्तान में खोजे गये। सबसे ज्यादा स्थलों लगभग 174, का संकेन्द्रण पाकिस्तान के चोलिस्तान क्षेत्र में खोजा गया। ये स्थल घग्घर-हकड़ा नदी के पुराने तले के पास स्थित थे। चूँकि अनेक नवीन स्थल सिंधु घाटी क्षेत्र के बाहर पाये गये है, इसलिए अब इसे सिंधु घाटी सभ्यता कहना उचित नहीं था। बहुत से विद्वान/शोधकर्ता इसे हड़प्पा की सभ्यता कहना पसंद करते हैं, क्योंकि सभ्यता को पहली बार खोजी गयी जगह के नाम पर नामकरण करना एक पुरातत्विक चलन है।

विस्तार क्षेत्र

सिंधु सभ्यता के स्थलों का विस्तार एक विस्तृत क्षेत्र में हुआ, जिसमें भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र और पाकिस्तान शामिल हैं। भौगोलिक दृष्टि से ये सिंधु क्षेत्र से अधिक विस्तृत थे। इनमें नदी तटीय निचले क्षेत्र, पूर्वी व दक्षिणी पूर्वी में उत्तर प्रदेश व राजस्थान से लेकर ब्लूचिस्तान के पहाड़ी व तटीय क्षेत्र व गुजरात के तटीय क्षेत्र सम्मलित हैं (मानचित्र 5.1)।

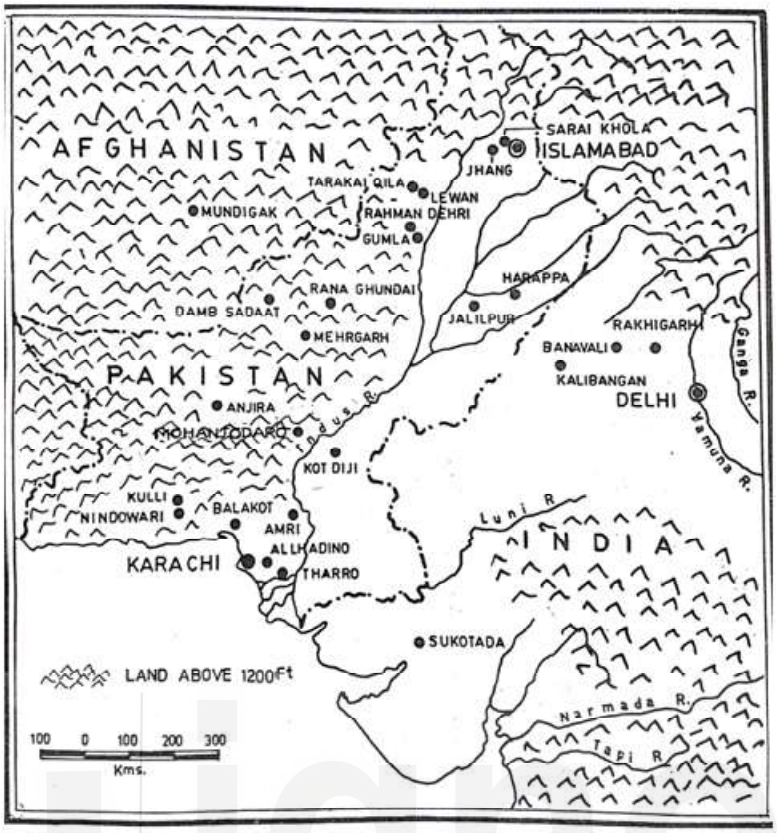

मानचित्र 5.1: प्रारम्भिक हड़प्पा के स्थल, ईएचआई-02, खंड 2।

सिंधु घाटी का निचला हिस्सा, एक समृद्ध क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध था और इसे सिंध दर्शाता है। यहाँ मोहनजोदड़ों लरकाना जिलें में स्थित है। ऊपरी सिंध में सुक्कुर पहाड़ियाँ स्थित हैं, जहाँ अनेक कामगारों की बस्तियाँ चकमक (chert) खादानों के क्षेत्र के आसपास मिली हैं। चकमक (Chert) हड़प्पावासियों के लिए एक महत्वपूर्ण सामग्री थी, जो की ब्लेड बनाने के काम आती थी। ब्लूचिस्तान का पश्चिमी क्षेत्र एक विविधतापूर्ण भूभाग था जिसका उस काल में इस्तेमाल किया जा रहा था। मकरान के तटीय क्षेत्र में सुतकागनदोर व सोतका-कोह जैसे स्थल स्थापित हुए, जो कि सिंधु सभ्यता, फारस की खाड़ी व मेसोपोटामिया के बीच समुद्री व्यापार में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन करते थे। इन स्थलों से आंतरिक मार्ग भीतरी प्रदेशों में जाते थे। ब्लूचिस्तान की अन्य बस्तियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण मार्गों पर और कृषि योग्य क्षेत्रों में स्थित थी। इन महत्वपूर्ण मार्गों के द्वारा ब्लूचिस्तान का तांबा, सीसा, अन्य अर्ध कीमती पत्थर (लाजवर्द, फिरोजा) को सिंधु घाटी की बस्तियों तक पहुंचाया जा सकता था।

सिंधु सभ्यता का सबसे उत्तरी स्थल शोर्तुघई है, जो कि उत्तरी पूर्वी अफ़ग़ानिस्तान में स्थित है। शोर्तुघई के माध्यम से बदकशां के लाजवर्द तथा मध्य-एशिया के टिन व स्वर्ण-खनिज तक पहुंचा जा सकता था। सिंध के उत्तरपूर्व में, पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में, सबसे प्रसिद्ध स्थल हड़प्पा है जो कि रावी नदी पर स्थित है। चोलिस्तान क्षेत्र का मरूस्थलीय भाग जिससे होकर नौकागम्य हकड़ा नदी प्रवाहित होती है, उसमें सिंधु बस्तियों का सर्वाधिक सकंन्द्रेण है। भौगोलिक दृष्टि से यह क्षेत्र सिंधु के मैदानी क्षेत्रों को राजस्थान से जोड़ता है, जहाँ तांबे के विशाल भण्डार पाये जाते हैं। पूर्व में सिंधु-गंगा विभाजक है, जो कि सिंधु व गंगा नदी प्रणालियों के बीच एक अंतवर्ती क्षेत्र है, यह पंजाब, दिल्ली, हरियाणा व राजस्थान के राज्यों और घग्घर नदी के जल मार्ग का गठन करता है। यह क्षेत्र राखीगढ़ी व बनावली और कालीबंगन जैसे स्थलों के लिए जाना जाता है (जो कि हड़प्पा जैसे बड़े स्थल है)। कुछ स्थल एकदम उत्तरी क्षेत्र सहानपुर के आसपास गंगा-यमुना दोआब में स्थित

हैं। अंत में कच्छ के रन व खम्भात की खाड़ी के क्षेत्रों में धौलावीरा का उदय हुआ। सौराष्ट्र के पूर्वी क्षेत्र में लोथल जैसा महत्वपूर्ण स्थल स्थित था। सभ्यता का दक्षिण की ओर सर्वाधिक विस्तार किम नदी के मुहाने पर स्थित भगतराव स्थल है।

5.4 काल क्रम

सभ्यता का काल रेडियो कार्बन डेंटिग की सहायता से 3300 बी.सी.ई. से 1300 बी.सी.ई. तक हो सकता है। हालाँकि अलग-अलग स्थलों का काल निर्धारण भिन्न-2 हो सकता है। यह पूर्ण घटना क्रम, विकास के स्तर के आधार पर तीन चरणों में बांटा जा सकता है। ये क्रम है – प्रारम्भिक हड़प्पा, परिपक्व हड़प्पा व उत्तर हड़प्पा। प्रारंभिक हड़प्पा व परिपक्व अवस्था के मध्य एक संक्रमणीय अवस्था को भी रखा जा सकता है। प्रत्येक चरण की विशेषता व उसके अनुमानित काल क्रम का सार निम्नवत है :

अवस्था	काल क्रम	महत्वपूर्ण स्थल	विशेषताएं
प्रारम्भिक हड़प्पा या क्षेत्रीयकरण	3300-2600 बी.सी.ई.	हड़प्पा, कोटदीजी, आम्री	किलेबंदी, ग्रिड़ योजना, व्यापार जालतंत्र का प्रारम्भिक विकास व शिल्प विशेष्टीकरण
संक्रमण का चरण	-	कुणाल, धौलावीरा, हड़प्पा	शिल्प विशेष्टीकरण के चरणों का विकास, संगठित सिचांई प्रणाली, मृदभांडों के डिजाइन व रूपों में आंशिक रूप से मानकीकृत स्वरूप।
परिपक्व हड़प्पा काल	2600-1800 बी.सी.ई.	मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, कालीबंगा, धौलावीरा	पूर्ण नगरीकरण का प्रारम्भ, कलाकृतियों में एकरूपता, पूर्ण विकसित व्यापार।
उत्तर हड़प्पा काल या स्थानियकरण	1800-1500 / 1300 बी.सी.ई.	हड़प्पा, सीसवाल, रोजदी, रंगपुर	कुछ स्थलों का समाप्त होना, पतन व चारागाही प्रणाली

5.5 उत्पत्ति के विषय में वाद-विवाद

खोज के शुरुआती वर्षों में, जब हड़प्पा की प्रारम्भिक-अवस्था की खोज नहीं हो पायी थी, तब इस विषय पर काफ़ी विवाद रहा कि, इस सभ्यता के उद्भव में देशी प्रभाव रहा या विदेशी प्रभाव से इसका उद्भव हुआ। विदेशी प्रभाव, विचारों के प्रसार अथवा लोगों के प्रवासन के रूप में देखे जा सकते हैं। विचारों या लोगों के प्रवासन के स्रोत के रूप में मेसोपोटामिया सभ्यता को सर्वाधिक अनुकूल उम्मीदवार के रूप से देखा गया।

1931 में जॉन मार्शल के इस सभ्यता के प्रारम्भिक उत्पत्ति के विचार सामने आये। उनके मोहनजोदड़ों पर दी गयी रिपोर्ट के अनुसार इस सभ्यता का उद्भव मूल रूप से देशी रहा, किंतु वे इसके समर्थन में कोई तथ्य नहीं दे सके। गार्डन चाइल्ड ने भी इसी विचार को अपनाया। उनका मत था कि हड़प्पा सभ्यता वर्षों तक के धैर्यपूर्ण प्रयासों का परिणाम है,

जिसकी विशेषता मनुष्य जीवन व पर्यावरण का उत्तम सामंजस्य था। इस सभ्यता ने प्रारंम्भिक भारत के साथ अनेक समानताएं साझा की, इसलिए उनके अनुसार यह 'विशिष्ट रूप से भारतीय थी'। 1920 के उत्तरार्ध में सिंध में अपने उत्खनन के दौरान एन.जी. मजूमदार ने 'आम्री' पर कार्य किया, जिससे मार्शल व चाइल्ड के सिद्धातों को मान्यता मिली। 'आम्री' में उन्होंनें हड़प्पा स्तर से नीचे विशिष्ट स्तरीकृत मृदभांड प्राप्त हुए। यह विशिष्टीकृत पुरात्तविक स्तर सिंध से प्राप्त कई स्थलों में समरूप थे। इस आधार पर उन्होंने तर्क दिया कि 'आम्री' मृदभांड़ों को हड़प्पा व मोहनजोदड़ों से संबंधित न मान कर ताम्रपाषाण संस्कृति के आरंभिक काल के रूप में देखा जाना चाहिए।

दूसरी ओर, अन्य विद्वान इस उपमहाद्वीप में शहरीकरण की शुरुआत के लिए मेसोपोटामिया की भूमिका में दृढ़ता से विश्वास करते हैं। इ. एच. मैके (1938) तर्क देते हैं कि यह सभ्यता मेसोपोटामिया की उरुक संस्कृति के आक्रमणकारियों तथा देशी लोगों के बीच परस्पर पारस्परिक प्रभाव से जन्मी थी। 1950 के दशक में विचारों का विभाजन इसी आधार पर किया गया था। स्टुअर्ट पिगॉट ने मार्शल के विचारों को समर्थन देते हुए तर्क दिया कि सभ्यता का उद्भव पूर्णतः देशी था, किंतु इसकी सही प्रक्रिया अभी तक समझी नहीं जा सकी है। एम. व्हीलर (1953) इस सम्भावना से इंकार करते हैं, उन्होंने मेसोपोटामिया के प्रभाव को महत्वपूर्ण माना, लेकिन उन्होंने प्रवासन को नहीं माना। उन्होंने यह कहा कि, मेसोपोटामिया प्रथम शहरी सभ्यता थी और यह एक प्रतिमान (model) के रूप में काम कर रही थी। एक परम्परा जिसे उधार लिया गया वह यहाँ भवन निर्माण में ईंटों का प्रयोग और मोहनजोदड़ो व हड़प्पा में निर्मित दुर्गों पर विदेशी प्रभाव दिखाई देता है। व्हीलर के अनुसार सिंधु सभ्यता ने मेसोपोटामिया से विचारों को ग्रहण किया। डी. एच. गार्डन ने तर्क दिया कि मेसोपोटामिया से लोगों का वास्तविक प्रवासन हुआ। उनके लिए एक मात्र मुद्दा प्रवासन का वास्तविक मार्ग निर्धारित करना था : भूमि या समुद्र। यही विचार हीन गेलर्डन व एस. एन. क्रेमर ने दिया था।

1960 के दशक में हमें धीरे-धीरे विद्वानों के विचार बदलते दिखे। पाकिस्तान के एफ. ए. खान ने 1955 व 1957 में सिंध में स्थित कोटदीजी की खुदाई की। इस स्थल पर हड़प्पा स्तर के नीचे एक किलेबंद दुर्ग परिसर मिला। विशिष्ट हड़प्पा की आकृतियों व रूपांकनों जैसे साधार तश्तरी, पीपल के पत्ते, मछली के शल्क व टेराकोटा केक ने यह महत्वपूर्ण संकेत दिया कि कोटदीजी के अवशेष सिंधु सभ्यता के पहले के हैं और बाद में सिंधु सभ्यता के विकास का पूर्वाभास देते हैं। जे. एम. कसल द्वारा 'आम्री' में 1959-62 में उत्खनन ने खान के विचारों को विश्वसनीयता दी। कालीबगंन में पुरातात्विक खुदाई 1960 में शुरू हुई, जो एक दशक तक लगातार चली, जिसमें अन्य महत्वपूर्ण खोजों का पता चला। यहाँ एक किलेबंद, योजनाबद्ध सिंधु सभ्यता से पूर्व की बस्ती विभिन्न मृदभांडों के साथ प्रकाश में आयी। उसी तरह, ए. घोष जो की घग्घर घाटी में कार्यरत थे, उन्हें सोथी नामक स्थल पर कालीबगंन के सिंधु पूर्व मृदभांडों के समकालीन मृदभांड मिले। उन्होंने आगे उल्लेख किया कि पूर्व सिंधु कालीन काली बगंन के मृदभांड़ों में कोटदीजी, हड़प्पा व कुछ ब्लूचिस्तान स्थलों के मृदभांडो में समान स्तरवाली समानताएं थी। इन सभी अवलोकनों में उन्होंने सिंधु सभ्यता के लिए 'सोथी' के आधार का दावा किया और उन्होंने 'सोथी' संस्कृति को प्रोटो हड़प्पा जैसा माना। एफ. आर. ऑलचिन व ब्रिजेट ऑलचिन ने भी यहीं तर्क दिया कि हड़प्पा सभ्यता का उद्भव, हड़प्पा पूर्व संस्कृति से हुआ जो कि सिंधु घाटी में इससे पूर्व स्थित थी। भारतीय पुरात्विक साहित्य में (1960 के दशक में) कोटदीजी, कालीबगंन व हड़प्पा के अन्य स्थलों की खोजों का वर्णन करने हेतु बार-बार पूर्व-हड़प्पा शब्द का प्रयोग हुआ।

1970-71 में, एक अप्रकाशित शोध कार्य में एम.आर. मुगल ने, 'पूर्व हड़प्पा' शब्द का प्रयोग निम्नलिखित विशेषताओं को दर्शाने के लिए कियाः स्थायी निवास, सुसंपन्न वास्तुकला, प्रशासनिक केंद्र की उत्पत्ति जो की दुर्ग की दीवारों से पता चलता है, तांबे, शैलखटी (steatite) और लाजवर्द का सार्वजनिक ज्ञान और प्रयोग, हड़डियों व पत्थरों के औजारों में समरूपता, विशिष्ट शिल्प जो व्यवसायिक व वर्गीय स्तरीकरण की संभावना को दर्शाते हैं, और अंत में पहिये वाली गड़ियों का प्रयोग, और समरूप मृदभांडों का बलुचिस्तान समेत एक विस्तृत क्षेत्र में विस्तार। उन्होंने इस अवस्था को ''प्रारंभिक शहरीकरण'' की अवस्था बताया, जो कि बाद में सघन समरूप, मानकीकृत व परिपक्व अवस्था की तरफ़ अग्रसर होती है। दो मुख्य कारक जो इस विकास के मुख्य कारण रहे, वह थेः मेसोपोटामिया के साथ व्यापार का बढ़ना और जनसंख्या वृद्धि। वास्तुकला, शिल्प विकास के स्तर, प्रौद्योगिकी और व्यापार तंत्र पर ध्यान केन्द्रित हुआ और वे मृदभांडों के अध्ययन से आगे निकल गये। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि अंतर के बावजूद, समकालीन संस्कृतियों में वास्तुकला, कलाकृतियों और तकनीकी की समानतायें थी।

1970 के दशकों से परिपक्व हड़प्पा काल से पहले आरंभिक हड़प्पा काल की मौजूदगी तेजी से स्वीकार्य हो गयी। लेकिन पुरातत्वविद् अभी भी उन वास्तविक कारकों को इंगित नहीं कर पाये हैं जो परिपक्व हड़प्पा चरण में संक्रमण के कारण बने। घोष (1965) का मानना था कि प्रतिभावान तानाशाह जो सुमेर के निवासियों के साथ प्रतिस्पर्धा करना चाहते थे, संक्रमण के पीछे थे। इस सिद्धांत के साथ समस्या, जैसा कि डी.के. चक्रबर्ती का मानना है, वह यह है कि तानाशाह आमतौर पर अधिक जटिल वर्ग-आधारित समाजों में पाये जाते हैं। प्रारंभिक हड़प्पा का स्तर इस जटिलता के स्तर पर नहीं था। साथ ही, किसी भी व्यक्ति के लिए यह बदलाव थोपना मुश्किल है अगर समाज ही इसके लिए तैयार नहीं है।

अपितु, डे. के चक्रबर्ती ने परिपक्व हड़प्पा चरण से प्रारंभिक हड़प्पा चरण को अलग करने वाले दो नये घटनाक्रमों पर बल दिया।

i) शिल्प कुशलता में विकास, जो कि वस्तु के उत्पादन की मात्रा बढ़ने में दिखाई देता है और जो तांबे धातु उद्योग के अधिक्य के साथ गहनता से जुड़ा होना चाहिए।

ii) संगठित सिंचाई व्यवस्था का विकास।

इन दो घटनाक्रमों ने एक अधिक जटिल समाज के निर्माण के लिए पूर्व शर्त बनाई होगी। एक जटिल समाज परिपक्व हड़प्पा की विशेषता है। इर्फान हबीब (2002), ने परिपक्व चरण में उल्लेखनीय एकरूपता पर गौर किया है। इसका अर्थ था युद्ध द्वारा राजनीतिक एकीकरण की प्रक्रिया सम्पन्न हुई। दरअसल 3/5 प्रारंभिक हड़प्पा स्थलों को पुनः बसावट से पहले त्याग दिया गया था। कुछ स्थल जैसे आम्री, कोटदीजी, नौशारों व गुमला आग में नष्ट हो गये। यहाँ यह पता लगाना कठिन है कि इन चार संस्कृतियों में से किसने आक्रमण का प्रयत्न किया। चूंकि हड़प्पा में लगातार बसावट बनी रही, और वहां कोई विनाश नहीं हुआ, इसलिए हबीब ने यह निष्कर्ष निकाला कि हड़प्पा की भिन्न-भिन्न प्रारम्भिक संस्कृतियों में एकता स्थापित करने के प्रयास में कोटदीजी संस्कृति ने अहम् भूमिका निभाई होगी। इस तर्क की एकमात्र कमजोरी यह है कि इन स्थलों पर हथियारों की संख्या कम ही पायी गयी है। यह तर्क युद्ध का समर्थन नहीं करता। कुछ विद्वानों का मत है कि इन स्थलों में आग लगने से विनाश एक प्रकार का अनुष्ठानिक शुद्धिकरण (यज्ञ) के कारण हुआ था। इस कारण से आम वैचारिकी (ideology) पर आधारित बस्तियों का पुनः निर्माण हुआ, जिसमें सड़क उन्नमुखीकरण, जल आपूर्ति व सामग्री की एकरूपता पर दिशा निर्देश दिये गये। उस प्रकार, एक आम वैचारिकी ने परिपक्व हड़प्पा की ओर सक्रंमण को बढ़ावा दिया।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही (✓) है, और कौन-सा गलत (×)?

   क) चार्ल्स मैसन पहले व्यक्ति थे जिसने हड़प्पा को एक प्राचीन शहर के रूप में पहचाना, जिसे एलेक्ज़ेंडर के समय का 'संगल' कहा जाता था। ( )

   ख) हड़प्पा सभ्यता के लोग लोहे के इस्तेमाल से परिचित थे। ( )

   ग) इस सभ्यता को हड़प्पा सभ्यता कहा जाता है, क्योंकि हड़प्पा प्रथम स्थल था जिसकी खोज हुई। ( )

   घ) हमारे पास इसका प्रमाण है कि हड़प्पा के पूर्वज बड़े शहरों में रहते थे। ( )

2) हड़प्पा सभ्यता की भौगोलिक विशेषताओं पर दस पंक्तियाँ लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

5.6 प्रारम्भिक हड़प्पा क्या है?

परिपक्व हड़प्पा काल का उद्भव एक अचानक हुआ विकास नहीं था। इसकी जड़ें उस क्षेत्र से जुड़ी हैं, जहाँ अनेक नवपाषाण-ताम्रपाषाण संस्कृतियों ने खाद्य उत्पादन को अपनाया। पिछली इकाइयों में आपने, ब्लूचिस्तान में स्थित मेहरगढ़, खैबर-परख्तूनख्वा में स्थित गुमला और रेहमान ढेरी, चोलिस्तान के हाकड़ा संस्कृति व पंजाब और हरियाणा जैसे स्थलों व संस्कृतियों के विषय में विस्तृत रूप से अध्ययन किया। लगभग 3300 बी.सी.ई. से इन स्थलों पर नवीन विकास की शुरुआत दिखाई देने लगती है, जो परिपक्व हड़प्पाकाल के पूर्वगामी थे। वास्तुशिल्प के अनुसार, दुर्गों का उद्भव हुआ, बस्तियों का दो भागों में विभाजन, ग्रिड नियोजन के प्रमाण के साथ, ईंटों का 1:2:4 में हड़प्पा अनुपात, मोती, सीपियों की चूड़ियों, पत्थर के औजार और यहाँ तक कि तांबा धातु कर्म भी दिखाई पड़ता है। इसके अतिरिक्त हम एक व्यापार तंत्र के विकास को भी देखते हैं। कुछ स्थलों पर हमें संचार के लिए लेखन का प्रयोग भी दिखाई देता है और यह लिपि परिपक्व हड़प्पा की लिपि के प्रतीकों से मिलती है। कृषि में फसलों की पद्धति परिपक्व चरण के समान है।

जहां एक ओर अनेक स्थलों में यही विकास दिखाई देता है, दूसरी ओर हम मृदभांडों में व उसकी परतों में भिन्नतायें देखते हैं। ये अंतर रूपाकंनों में भी थे, हालांकि कुछ साझा रूपाकंन परिपक्व अवस्था में भी जारी रहे। इस चरण में, हमें शिल्प का मानकीकरण नहीं दिखाई देता, जो परिपक्व चरण का एक महत्वपूर्ण लक्षण है। इसलिए जिम शैफर (1992) ने प्रारंभिक हड़प्पा के चरण को क्षेत्रीयकरण का युग भी कहा है। मृदभांडों में अंतर ने पुरातत्वविदों को चार प्रारंभिक हड़प्पा संस्कृतियों में वर्गीकृत करने के लिए प्रेरित किया : कोटदीजो, सोथी-सीसवाल, आम्री-नल व डम्बसदात (पोशैल-2002)।

5.6.1 प्रारंभिक हड़प्पा की संस्कृतियाँ

लगभग 3200 बी.सी.ई. में एक परिवर्तन हुआ जो कि चार संस्कृतियों के उभरने में देखा जा सकता है। ये पूरे सिंध क्षेत्र व ब्लूचिस्तान के कुछ क्षेत्रों में स्थित थे। ये अपने विशिष्ट

मृदभांड़ों द्वारा पहचाने जाते हैं जिसका नामकरण उनके स्थलों के आधार पर हुआ।

1) कोटदीजी संस्कृति NWFP, पाकिस्तान, पंजाब व उत्तरी सिंध के बड़े भाग में फैली हुई थी।

2) सोधी-सीसवाल संस्कृति की बस्तियां उत्तरी राजस्थान, भारतीय पंजाव व हरियाणा तक थी।

3) आम्री-नल संस्कृति, ब्लूचिस्तान, मध्य व दक्षिणी सिंध, जिसका विस्तार गुजरात तक था, में पायी गयी है।

4) दम्बसदात चरण मध्य ब्लूचिस्तान में स्थित था।

1) कोटदीजी

कोटदीजी संस्कृति प्रारंभिक हड़प्पा की संस्कृतियों में सबसे महत्वपूर्ण है। यह सर्वप्रथम सिंध के कोटदीजी क्षेत्र में 1955 में एफ. ए. खान द्वारा पहचानी गयी। इस स्थल पर प्रारंभिक व परिपक्व हड़प्पा, दोनों ही चरण पाये गये हैं। प्रारंभिक हड़प्पा चरण 3300 बी.सी.ई. का है। इस चरण में किलेबंदी थी, बस्ती ऊपरी दुर्ग व निचले नगर में विभाजित थी। किलेबंदी का निर्माण मिट्टी की ईटों, पत्थरों के द्वारा हुआ था और इन्हें बुर्जों के साथ तैयार किया गया था। बस्ती के अंदर से लघुपाषाणिक-उपकरण व वस्तुएं जैसे मनका, पकी मिट्टी (Terracotta) के खिलौने, पशु मूर्तियां, चूड़ियाँ व मृदभांड जैसी वस्तुएं प्राप्त की गयी हैं। ये मृदभांड अच्छी तरह आग में पके लाल व बादामी रंग के हैं और साथ ही इनमें सामान्य रूपांकन जैसे सींग वाले देवता, पीपल की पत्तियां, मछली शल्क जैसे चित्र काले रंग में बने होते थे (चित्र 5.1)।

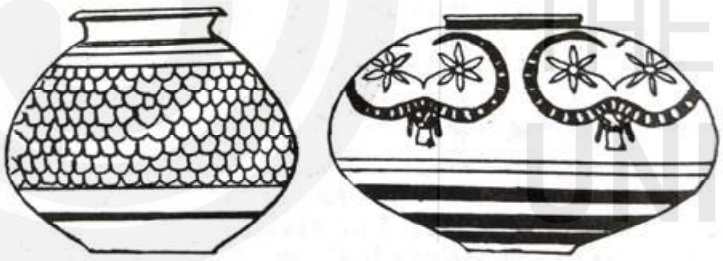

चित्र 5.1: बायें – प्रारम्भिक सिंधु मृदभाड़ : कोटदीजी; दायें – प्रारम्भिक सिंधु मृदभाड, - कालीबंगन, स्रोत : ई एच आई-02, खंड-2.

कोटदीजी संस्कृति बाद में अन्य स्थलों पर भी खोजी गयी। स्थलों का संकेन्द्रण चोलिस्तान में था जबकि कुछ स्थलों की खोज पंजाब में भी हुयी। ब्लूचिस्तान में कुछ स्थल जैसे – मेहरगढ़, नौशारों, कोटदीजी संस्कृति से प्रभावित दिखाई पड़ते हैं। किंतु उनकी भौतिक संस्कृति पर ज्यादा प्रभाव दम्बसदात का है। पोशैल के अनुसार इसकी लगभग 111 स्थलों की पहचान हो चुकी है जिसका औसत क्षेत्रफल 6.31 हेक्टेयर था।

चोलिस्तन

कोटदीजी संस्कृति यहाँ हाकड़ा अवस्था के बाद में आई। अधिकांश स्थल घग्घर-हाकड़ा नदी के सूखे तल पर स्थित है। 40 स्थलों की जानकारी प्राप्त हुयी जिनका क्षेत्रफल लगभग 0.1 हेक्ट. से 30 हेक्ट. तक था। इनमें जलवली (22.5 हेक्ट.) व गमनवाला (27.3 हेक्ट.) सबसे बड़े स्थल हैं। दुर्भाग्यवश अभी तक किसी भी क्षेत्र की खुदाई नहीं हो पायी है।

हालांकि कुछ महत्वपूर्ण घटना क्रम को देखा जा सकता है। प्रथमतः स्थायी बसावट की ओर प्रवृति। इस अवस्था में हाकड़ा अवस्था की तुलना में शिविर स्थलों की बहुत कम उपस्थिति दिखाई देती है। दूसरा हम देखते हैं, शिल्प विशेषीकरण में बढ़ोतरी हो रही थी, जैसा 14 स्थलों पर मृदभाड़ों के पकाने हेतु भट्ठों के मिलने से इसका प्रमाण मिलता है।

कोटदीजी संस्कृति के अन्य महत्वपूर्ण स्थल :

1) तरकई किला, लेवान, इस्लाम चौकी व लेक लरगई खैबर पक्खतूनख्वा की बन्नू घाटी में।

2) गोमल घाटी में झंडी बाबर, मारू I, मारू II, घाड़े उमर खान, रहमान ढेरी व गुमला।

3) रहमान ढेरी, एक महत्वपूर्ण स्थल है, जहाँ से दो महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती हैं, प्रथम, हाथी दाँत से बनी मुहरें व मृदभाड़ों पर बने भित्ति चित्र व द्वितीय, ये संचार व्यवस्था के शुरुआती व संभवतः राजनीतिक नियंत्रण को दर्शाते हैं।

4) पोटवार पठार में स्थित सराइ खोला। यहां चरण II कोटदीजी का है। इस चरण में चाक के बने बर्तनों की शुरुआत हुयी। अन्य सामग्री जो खोजी गयी, वह तांबा, पकी मिट्टी व शंख से बनी चूड़ियाँ, पत्थर के औजार, पकी मिट्टी से बनी पशु लघुमूर्तियां, खिलौने, बैल गाड़ियाँ व पत्थर के मनके हैं।

पंजाब

जलीलपुर व हड़प्पा में प्रारम्भिक हड़प्पा संस्कृति के लक्षण दिखाई देते हैं। यहाँ हम केवल हड़प्पा के स्थल पर चर्चा करेंगे। कोटदीजी संस्कृति का जन्म 2800-2600 बी.सी.ई. नवपाषाण रावी-हाकड़ा चरण के बाद में हुआ था। स्थल लगभग 20 हेक्ट. है और मिट्टी की इंटों की दीवार से घिरा हुआ है। बस्तियां दो भागों में विभाजित हैं, जिनमें उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम की तरफ़ सड़कें उन्मुख थी। घरों के निर्माण में ईटों का अनुपात 1:2:4 होता था। शिल्प में यह स्थल मनकों का एक महत्वपूर्ण उत्पादन केन्द्र है, जैसा कि पत्थर की बेधनी व कच्चे माल के फलकें सिद्ध करती है। लोकप्रिय सामग्री जिसमें इंद्रगोप, सूर्यकांत, लाजवर्द, अमेज़नी पत्थर व गोमेद के मनके शामिल हैं विनिमय की ओर संकेत करते हैं। अन्य वस्तुओं की खोज में पत्थर, हड्डी के उपकरण शामिल हैं। इसके साथ तकले की चकी व आभूषण जैसे हार व चूड़ियाँ जो शंख व पकी मिट्टी के बने होते थे मिले हैं। मिट्टी के बर्तनों पर डिजाइन भी शामिल थे जैसे मछली के शल्क, पीपल की पत्तियां जो कि परिपक्व चरण में भी पायी जाती थी। सबसे महत्वपूर्ण खोज मिट्टी के बर्तन व वर्गाकार मुहरों पर अंकित सिंधु लिपि का प्रारम्भिक रूप था। इसके अतिरिक्त हमने एक वर्गाकार, चूना पत्थर के बाट (Weight) की खोज की है।

2) सोथी-सीसवाल संस्कृति

राजस्थान में सोथी व हरियाणा में सीसवाल का उत्खन्न क्रमशः 1955 व 1970 में हुआ। दोनों स्थलों पर एक समान मृदभांड़ों की प्राप्ति हुई। 1960 के दशक में ए. घोष (1964) ने इनकी समानता कोटदीजी मृदभांडो के साथ बताई। यहाँ के मृदभाड़ों के रूपांकनों में समानता है किंतु कुछ प्रमुख भिन्नता आकार व ऊपरी सतह से जुड़ी विशेषताओं में पायी गयी है, जिसके फलस्वरूप, सोथी-सीसवाल संस्कृति को कोटदीजी की उपसंस्कृति के रूप में पहचाना गया है। पोशैल के अनुसार इस संस्कृति से जुड़े 165 स्थलों को पहचाना गया है। ये स्थल मुख्य रूप से राजस्थान व हरियाणा क्षेत्र में स्थित हैं। बिना खुदाई वाले कुछ स्थल जैसे रोहिरा व महोराना भारत के पंजाब क्षेत्र में स्थित हैं।

राजस्थान में कालीबंगन सबसे महत्वपूर्ण स्थल है (चित्र 5.2)। इस स्थल से बस्ती के दो चरणों के प्रमाण मिले हैं। प्रथम चरण सोथी-सीसवाल चरण है। इस चरण में, स्थल किलेबंद दीवारों से घिरा हुआ था। दीवार के भीतर मिट्टी से बनी ईटों से बने घर जो एक केन्द्रीय आंगन से युक्त थे, खोजे गये हैं। यहाँ पर तंदूर व चूना प्लास्टर वाले भंडारगर्त को प्राप्त किया गया है। अन्य प्राचीन वस्तुओं में तांबें की वस्तुए, लघुपाषाण औजार, मिट्टी और शंख की चूड़ियाँ, व अर्द्धमूल्यवान पत्थर और सोने के मनके शामिल हैं। कुछ मिट्टी के टुकड़ों पर सिंधु लिपि से मिलते जुलते प्रतीक मिले हैं। दक्षिण के तरफ़ हल रेखा के चिन्ह वाले खेत के मैदान भी खोजें गये। यह पूरा चरण लगभग 2900/2800 बी.सी.ई. काल का है।

हरियाणा

हरियाणा क्षेत्र सोथी-सीसवाल संस्कृति से समृद्ध है। सीसवाल के अलावा, ये चरण कुनाल, बालू, बनावली, राखीगढ़ी व भीराना में पाया गया है। लगभग इन सभी स्थलों से मिट्टी के ईटों से बनी संरचनाओं के प्रमाण मिले हैं। कुनाल में ईंटों का अनुपात 1:2:3 तथा 1:2:4 का है तथा भीराना में अनुपात 1:2:3 का है। कुनाल में प्रारम्भिक हड़प्पा स्थल का क्षेत्रफल लगभग एक हेक्ट. था। यहाँ हमारे पास दो प्रारम्भिक हड़प्पा संस्कृतियाँ IB व IC हैं। IB का वर्गीकरण इसमें मिले सोथी बर्तनों के आधार पर प्रारम्भिक हड़प्पा काल में किया गया है। किंतु इस अवधि में कोई भी ईटों से बनी संरचना नहीं थी। ईटों के बजाय यहाँ के लोग नरकुल और मिट्टी (wattle and Daub) से बने संरचनाओं में रहते थे। अगले चरण IC में ईटों के मकान दिखाई देते हैं, जिनमें ईटों का अनुपात 1:2:4 या 1:2:3 होता था। घर से कूड़े के डिब्बे व जार भी प्राप्त हुये हैं। इस चरण का एक महत्वपूर्ण खोज, सोने व चांदी के आभूषणों का संग्रह जो लाल रंग के बर्तन में मिला है। साथ ही लाजवर्द के छोटे मनकों, 92 गोमेद के मनके व प्रकाचित मिट्टी से बनी व कार्नेलियन मोतियों के बड़े भंड़ार/संग्रह

चित्र 5.2: प्रारम्भिक सिंधु कालीन मृदभाड़ : कालीबंगन। स्रोतः ईएचआई-02, खंड-2

प्राप्त हुये थे। धातु कर्म के भी कुछ प्रमाण मौजूद हैं क्योंकि हमने पिघली हुई धातु के साथ पकी मिट्टी की कुल्हिया (crucible) की खोज की है। अन्य महत्वपूर्ण खोजें मछली के काटें, तीर व नोकदार भाले, समतल कुल्हाड़ियाँ हैं। राखीगढ़ी से योजनाबद्ध बस्तियों व मिट्टी की ईंटों की सरंचना से जुड़े आंकड़ें प्राप्त हुये हैं। अन्य महत्वपूर्ण कलाकृतियों में बिना खुदे मुहरैं, भित्ति चित्रों के साथ मृदभांड़ों, पकी मिट्टी के पहियें, गाड़ियां और बैल, झुनझुनें, चकमक के ब्लेड, बाट, व एक मूसल शामिल हैं। इस स्थल से प्रचुर मात्रा में मवेशियों की हड्डियाँ पायी गयी हैं जो कि पशुपालन के महत्व को दर्शाती हैं।

3) आम्री-नाल संस्कृति

एक और संस्कृति जिसकी पहचान प्रारम्भिक हड़प्पा की संस्कृति के रूप में हुई है वह है आम्री-नल संस्कृति। इस संस्कृति वाले स्थल पर दो प्रकार के मिश्रित मृदभांडों की प्राप्ति हुई है – एक की खोज 'आम्री' में व दूसरे की खोज 'नल' में हुई। ये स्थल सिंध व ब्लूचिस्तान दोनों में स्थित हैं। ब्लूचिस्तान के स्थलों पर 'नल' मृदभांडों की अधिकता है, व सिंध के स्थलों से हमें आम्री मृदभांड अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। आम्री के मिट्टी के बर्तनों को हल्के लाल अथवा बादामी रंग के होने तक पकाया जाता था या साथ-साथ लाल अथवा बादामी रंग पर काले रंग के घुमावदार डिजाइन के साथ चित्रित किया जाता था। रूपाकंनों के रूप में मृदभाडों में ज्यामितिये व वक्रीय लाइनों का प्रयोग होता था जिनमें लाल रंग होते थे। वहीं दूसरी तरफ़ नल मृदभांडों को बादामी व हल्के गुलाबी रंगों तक पकाया जाता था, और हल्का बादामी व लाल रंग उपर से लगाया जाता था। इन मृदभांडों पर अलग-अलग रंगों से डिजाइन बने होते थे, ये उपमहाद्वीप में खोजे गए सबसे सुंदर मृदभांड़ों में से एक हैं। इस संस्कृति के लोग अनिवार्य रूप से चारागाही होने के कारण गर्मियों में पहाड़ों की तरफ़ प्रवासन करते थे व सर्दियों में सिंधु घाटी में (पोशैल-2002). इस संस्कृति के लगभग 164 स्थलों को पहचाना गया है, जिसमें छोटे शिविरों के रूप में 3.67 हेक्ट. के स्थल औसत हैं। कुछ बस्तियों में किले बंदी भी थी।

गुजरात : एक विशेष मामला

जैसा कि ज्ञात हुआ है, गुजरात के कुछ स्थलों पर आम्री-नल और कोटदीजी दोनों शैली के मृदभांड़ों की खोज से इसे विशेष दर्जा प्राप्त है। हड़प्पा के प्रारम्भिक चरण की खुदाई पादरी, कुन्टासी, व धौलावीरा नामक स्थानों पर हुई है। धौलावीरा में दो समयावधि प्रथम I व द्वितीय II प्रारम्भिक हड़प्पा काल की है (बिष्ट, 2000)। सभ्यता के ठीक प्रारम्भ से ही उन स्थलों की किलेबंदी, रोड़ी-पत्थरों व मिट्टी के गारों से की गई थी। किलेबंदी के अंदर के ढांचे में प्रयुक्त हुई ईटों का अनुपात 4:2:1 है। तांबा धातु कर्म, पाषाण उद्योग, सीप-कार्य और मृदभांड़ों के कार्य को हम आर्थिक परिदृश्य में रख कर देख सकते हैं। यहाँ मृदाभांड़ों की खोज हुयी है। वे आम्री-नल व कोटदीजी दोनों स्थलों से सम्बंध दर्शाते हैं। द्वितीय (II) समयावधि में हम इन स्थलों का विस्तार देखते हैं जिसमें भवनों के साथ किलेबंदी के लिए 2.8 मीटर मोटी मिट्टी के ईंटों की दीवार पायी गयी है। पादरी में प्रारम्भिक हड़प्पा का समय 3300-2600 बी.सी.ई. का है, जिसका क्षेत्रफल 3 हेक्टेयर था। वहाँ के निवासी मिट्टी से बनी ईटों के घरों में रहते थे और ताँबा धातु कर्म से परिचित थे। हमनें वहाँ मृदभांड़ों के भट्टों व मनकों के उत्पादन से सम्बन्धित साक्ष्य भी प्राप्त किये हैं। यहाँ प्राप्त मृदभांड़ भी प्रारंभिक हड़प्पा स्थलों से प्राप्त बर्तनों से बहुत भिन्न हैं। यह हाथों द्वारा निर्मित उत्पाद हैं, जिस पर गाढ़े लाल रंग की चौड़ी परत लगी हुई है। उस काल के ऊपरी स्तर में पाए गये बर्तनों के टुकड़ों पर सिंधु घाटी का आलेख भी पाया गया है।

4) दम्बसदात

मृदभांड़ों के आधार पर दम्बसदात को भी हम प्रारम्भिक हड़प्पा की उप-संस्कृति कह सकते हैं। इस संस्कृति के मृदभांड़ भी कोटदीजी से प्रभावित है, परंतु इस पर अंकित विभिन्न पौधे, जानवर एवं ज्यामितीय रूपाकंन इसे सबसे अलग बनाते हैं। पोशैल (2002) ने इसे प्रारम्भिक हड़प्पा काल का स्थानीय रूप कहा है। इस संस्कृति की लगभग 37 स्थलों की जानकारी मिली है, जिनका औसत आकार 2.26 हेक्टे. है। सबसे बड़ा स्थल क्वेटा मीरी (लगभग 23 हेक्ट.) और दूसरे स्थान पर मुंड़ीगक (18.75 हेक्ट.) है। अन्य महत्वपूर्ण स्थल दम्बसदात व फैज मोहम्मद हैं। इसके अतिरिक्त यह भी प्रतीत होता है कि मेहरगढ़ व नौशारों की संस्कृति भी इस उप-संस्कृति से प्रभावित थी।

5.6.2 कुछ महत्वपूर्ण अवलोकन

मृदभांड़ों की विभिन्न परम्पराओं के बावजूद, इन क्षेत्रीय संस्कृतियों में बहुत सी समानताएं पायी गयी हैं। पहला प्रमुख विकास कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति से परिलक्षित होता है। बैल को एक भारवाही पशु में बदल दिया गया। हड़प्पा के पूर्व सिंधु स्तरों में गाड़ी के पहियों की लकीरों के प्रमाण मिले हैं, जिनका अध्ययन कोटदीजी काल के जलीलपुर (पश्चिमी पंजाब) में पाए पकी मिट्टी के पहियों की गाड़ी, उसके ढाचें व मिट्टी के बैल के संदर्भ में किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कालीबगंन में पुरातत्वताओं ने एक सीधी हल रेखा के निशान वाला एक मैदान खोजा है, जो परिपक्व हड़प्पा मलबे के नीचे मिला है। अतः पुरातत्वविदों ने इसे प्रारम्भिक सिंधु काल माना है।

कृषि क्षेत्र में विकास के कारण प्रति व्यक्ति उपज में बढोतरी हुयी थी। प्रारम्भिक सिंधु काल में गेहूं व जौ की खेती के भी साक्ष्य मिले हैं। उदाहरण के लिए, रेहमान ढेरी व कालीबंगन में रबी की फसलें उगाई जाती थीं। सोथी-सीसवाल के एक स्थल-रोहिरा में ज्वार, जो कि एक खरीफ अथवा गर्मियों में उगायी जाने वाली फसल है, उगाई जाती थी। सिंधु घाटी के प्रारंभिक चरण में कालीबंगन में तन्दूर भी पाए गये हैं। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि भारत में रोटी बनाने का इतिहास 5000 साल पुराना है।

सभी प्रारंभिक हड़प्पा स्तरों में चाक से बनाये मृदभांड़ों का प्रभुत्व है। कोटदीजी के उत्कृष्ट ब्लेड उत्तर सिंध में स्थित सुक्कुर-रोहड़ी पहाड़ियों से प्राप्त चकमक पत्थर से बनाये जाते थे। नल (ब्लूचिस्तान) में एक कार्यशाला के अवशेषों से पता चलता है कि तांबे के प्रगलन में काफ़ी प्रगति हुई थी। नल और कालीबंगन दोनों स्थलों से शैलखटी (steatite) और शंख के मनके मिले हैं जो यहाँ लम्बी दूरी के व्यापार के द्वारा पहुँचे होंगे।

पहले की हाकड़ा चरण की बस्तियों की तुलना में प्रारम्भिक सिधुं की बस्तियाँ आकार व संख्या में बड़ी व अधिक स्थायी प्रकृति की थी। हालांकि पकायी हुई ईटों का प्रयोग बहुत कम था किंतु मिट्टी की ईटों से बनी संरचना प्रचुर मात्रा में है। हड़प्पा के कोटदीजी के स्तरों में अनुमानित क्षेत्रफल 40 हेक्ट. है। हरियाणा के सोथी सीसवाल स्थल के राखीगढ़ी के संदर्भ में भी यही स्थिति है। पोशैल का 291 प्रारम्भिक सिंधु स्थलों के आधार पर यह अनुमान है कि इनका औसत क्षेत्रफल 4.5 हेक्ट. था, जिसमें 34 बस्तियों का क्षेत्रफल 10 हेक्ट. से ज्यादा था। हालाँकि अधिकतर स्थलों में नगरीकरण की क्रांति नहीं पहुँची थी, फिर भी कुछ बस्तियों ने छोटे शहरों का दर्जा प्राप्त कर लिया था। प्रारम्भिक सिंधु घाटी के कुनाल और नौशारों में कुछ मुहरें प्राप्त हुई हैं, लेकिन उनकी प्राप्ति सीमित ही है। इसी प्रकार महलों व स्मारकीय भवनों की संख्या भी कम ही ज्ञात है। कोटदीजी, कालीबंगन, कोहत्रास बूथी (पश्चिमी सिंध) और रेहमान ढेरी में शासकों द्वारा निर्मित रक्षात्मक दीवार

पायी गयी है। हालाँकि ऐसी प्रतीत होता है कि बड़े - शक्तिशाली राज्यों की तुलना में छोटी रियासतें ज्यादा रही होंगी। कई स्थलों पर अंत्येष्टि संस्कारों का अभ्यास किया जाता था। ब्लूचिस्तान के नल व दम्बबूथी तथा गुजरात (आम्री-नल संस्कृति) के सुरकोटडा और नागवाड़ा जैसे स्थलों पर हमें आशिंक रूप से दफनाने की प्रथा का भी पता चला है। कोटदीजी के स्थलों में पेरियानों धुन्डई व मुगल धुन्डई (उत्तर-पूर्वी ब्लूचिस्तान) में मृतकों का पहले अंतिम संस्कार होता था, फिर उनकी हड्डियों को इकट्ठा करके एक मटके में दफना दिया जाता था।

समापन विचार

उपरोक्त चर्चा से यह बात स्पष्ट है कि कुछ विशिष्ट पुरातात्विक घटकों ने प्रारंभिक हड़प्पा चरण का गठन किया था। ये निम्नलिखित हैं :

1) किलेबंदी वाली बस्तियाँ व मानकीकृत ईटों द्वारा निर्मित घरों की योजनाबद्ध व्यवस्था।

2) जालीदार (ग्रिड) संरचना व बस्तियों के दो किलेबंदी वाले क्षेत्रों में विभाजित होने के प्रमाण मिलते हैं।

3) मृदभांड़ों के आकार ओर डिजायनों में आंशिक रूप से मानकीकरण जिनमें से कुछ परिपक्व हड़प्पा तक भी मिलते हैं। ये सभी संबंधित पुरातात्विक स्थलों पर विभिन्न अनुपातों में मिलते हैं।

4) विविध कलाकृतियाँ जैसे पक्की मिट्टी की टिकिया व चित्रित रूपांकन जैसे मछली के शल्क, पीपल के पत्ते आदि जो कि परिपक्व हड़प्पा चरण तक जारी रहते हैं।

5) कुछ स्थानों पर परिपक्व हड़प्पा लिपि के अनेक संकेताक्षरों का होना।

6) कुछ स्थलों में ज्यामितीय रूपांकनों के साथ बटन वाली मुहरों की उपस्थिति भी पायी गयी है।

7) सम्पूर्ण सिंधु व हाकड़ा मैदानों में हल के आधार पर कृषि के सम्पूर्ण जीवन का समकेन व विस्तार। यह बुनियादी फसलों के प्रकारों के साथ रहा जिनका बोना परिपक्व हड़प्पा काल में भी जारी रहा।

8) कच्चे माल का व्यापक परिवहन व विनिमय ।

9) अनुष्ठानिक मान्यताएं पकी मिट्टी की मवेशियों व स्त्री लघु-मूर्तियों की एक विस्तृत श्रृंखला में सन्निहित है।

10) एक विविधतापूर्ण और सुस्थापित धातु कर्म परंपरा, जो उत्तरोत्तर काल में भी निर्बाध बनी रही।

11) इस स्तर पर सिंधु के बाटों की उपस्थिति।

12) अंत में परिपक्व हड़प्पा के उपर इस चरण के अपरिवर्तनशील स्तरीकरण की प्रधानता।

इन सभी विशेषताओं के विषय में निष्कर्ष से यह सिद्ध होता है कि प्रारंभिक हड़प्पा सभ्यता का स्तर हड़प्पा सभ्यता का प्रथम चरण है। डी. के. चक्रबर्ती (1999) का मत है कि एक समान संस्कृति, पूरे सिंधु-हाकड़ा के मैदानों में फैल गयी और इसने स्वयं को स्थानीय संदर्भ के अनुकूल बनाया।

संक्रमणकालीन चरण (2600 बी.सी.ई.)

जैसा कि पूर्व भाग में उल्लेखित है, हम सिंधु घाटी सभ्यता को तीन मूलभूत स्तरों में विभाजित कर सकते हैं जो इस प्रकार हैं : प्रारम्भिक, परिपक्व व उत्तर हड़प्पा काल। हालाँकि कुछ स्थलों पर प्रारम्भिक हड़प्पा से परिपक्व हड़प्पा तक सक्रंमण के प्रमाण उपलब्ध हैं। परिपक्व हड़प्पा के रूप में आने में एक आकस्मिता दिखाई पड़ती है, विशेषत : लेखन, कला रूपों की बहुलता व वस्तुओं के सामान्य पैमानों में उपलब्धि। एक सभ्यता गुणात्मक परिवर्तनों से गुज़रती है, फिर भी उसकी सटीक अवधि व रूपातंरण की प्रक्रिया का समुचित आकलन अध्ययन का विषय बना हुआ है। तीन स्थलों हड़प्पा, कुनाल व धौलावीरा से यह स्पष्ट है कि वास्तव में रूपांतरण का क्रम सिंधु घाटी सभ्यता के उद्भव के संदर्भ में हो रहा था।

हड़प्पा में, प्रारम्भिक हड़प्पा चरण के ऊपरी स्तर में परिपक्व चरण की ओर संक्रमण निवास क्षेत्रों के निर्माण में उत्तर-दक्षिण और पूर्व-पश्चिम सड़कों की जालीदार संरचना द्वारा भी दर्शाया गया है। **कुनाल** में समयावधि I C, दर्शाती है कि क्लासिकल हड़प्पा अनुपात 1:2:4 में मिट्टी की ईंटों का प्रयोग हुआ है, सड़कों में सोख्ता गर्त (soakage pits) पर आधारित सुनियोजित जल-निकासी व्यवस्था मौजूद थी। चौकोर अपितु अलिखित घुंडी वाली शैलखटी व शंख की मुहरे; विशिष्ट हड़प्पा की तांबे के तीर शीर्ष; कई अर्द्ध कीमती पत्थर के मनके, सोने व चांदी के गहने जिनमें चांदी के मुकुट शामिल हैं, बाजूबंद व चक्र के आकार के मनके भी सिंधु घाटी सभ्यता से जुड़े हुए हैं। **धौलावीरा** में भी समयावधि IV उत्कृष्ट सिंधु घाटी सभ्यता को दर्शाती है। हालाँकि III-B चरण तक हड़प्पा तत्वों जैसे कि मुहरें, लिपि, विभिन्न प्रकार के मृदभांड़ों के साथ-साथ सजावटी रूपाकंनों द्वारा बस्ती का मूल खाका तैयार कर लिया गया था।

इस संक्रमण की व्याख्या कैसे की जा सकती है? इसका कारण, शिल्प विशेषज्ञता में बढ़ता हुआ स्तर ही है। मृदभांडों को बनाने का कार्य वाणिज्यिक स्तर पर होता था, चूड़ियों की उपस्थिति जो ''टर्बीनैला पाईरम'' (एक प्रकार का शंख) से बनी हुई थी, चकमक से बने हुए ब्लेड़ जिनका स्रोत सिंधु के ऊपरी हिस्से में स्थित सुक्कुर रोहरी पहाड़ियां थी, ये सब हड़प्पा के प्रसंगोचित संदर्भ में मौजूद हैं। अरावली के साथ-साथ ताम्र धातु कर्म भी विकसित हुआ (इस परंपरा का जो कि उत्तरी पूर्वी राजस्थान, व इसका विस्तार हरियाणा के नारनौल क्षेत्र व हरियाणा में तोशाम की टिन धारक पहाड़ियाँ हैं)। दूसरा कारक है संगठित सिंचाई प्रणाली का उद्भव। सिंधु-हकड़ा के मैदानों में बस्तियों की संख्या काफ़ी बढ़ गयी, यह केवल सिंचाई तंत्र के विस्तार से ही सम्भव हो सकता था। शिल्प कला में विशेषज्ञता तथा सामाजिक संस्थागत परिवर्तन परिपक्व चरण का सूचक है चाहे इनमें कितनी ही अनिश्चितता हों। उदाहरण के लिए, 'कुनाल' से प्राप्त सोना चांदी के आभूषण एक आभिजात्य वर्ग के उभरने के बारे में संकेत करते हैं। धौलावीरा में शहरी क्षेत्रों में कई विभाजन, इस संभावना की ओर संकेत करते हैः कि जल व्यवस्था, सिंचाई व्यवस्था एक सामाजिक रूप से नियंत्रित व्यवस्था थी। इसी आधार पर एक नियंत्रक व शासन के केन्द्र का उदय होता स्पष्ट है।

(**स्रोत** - डी.के. चक्रबर्ती, 1999.)

बोध प्रश्न 2

1) किसी एक प्रारम्भिक हड़प्पा संस्कृति पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) संक्रमण काल के कुछ विशेषताओं पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) सिंधु सभ्यता के उद्‌भव पर वाद-विवाद की चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

5.7 सारांश

इस इकाई में, हमने चार समकालीन पुरातात्विक संस्कृतियों का अध्ययन किया जिसने प्रारम्भिक हड़प्पा चरण का गठन किया। इन संस्कृतियों से कुछ महत्वपूर्ण विकास हुये जो कि परिपक्व हड़प्पा चरण के लिए भावी संकेत सिद्ध हुये। परिपक्व चरण की तरह, यहाँ भी हमारे पास किलेबंद शहरों, एक विस्तृत कृषि आधार, शिल्प उत्पादन व व्यापार में वृद्धि के उदाहरण हैं। इन संस्कृतियों में कमी परिपक्व अवस्था में दिखाई देने वाली एकरूपता की है। साथ ही यहाँ लेखन का प्रयोग नहीं है। इन संस्कृतियों की उपस्थिति निश्चित रूप से यह सिद्ध करती है कि इस सभ्यता का उद्‌भव देशी था, हालांकि वास्तविक कारण जो इस सभ्यता को परिपक्व अवस्था में पहुंचाने का कारक बने अभी भी ज्ञात नहीं है। इन बिंदुओं को संदर्भ में रखते हुए हमारा ध्यान परिपक्व हड़प्पा चरण की तरफ़ जाता है, जिस पर विचार अगली इकाई में किया जायेगा।

5.8 शब्दावली

पुरावशेष : मानव की अतीत में हस्तनिर्मित चीज

कालक्रम : समय की गणना की विधि

दुर्ग : शहर का किला

प्रसार : इस सिद्धांत का तर्क है किसी भी नई तकनीक या विचार की उत्पत्ति एक जगह होगी जहाँ से यह शेष दुनिया में फैलेगी।

उत्खन्न : एक प्राचीन स्थल की खुदाई

मृदभांड तंतु : मृदभांड बनाने की मिट्टी

अन्नभंडार : अनाज के लिए भंडारगृह

रूपाकंन : मृदभांड पर सजावट

खानाबदोशी : पशु चरवाहों से जुड़े समुदायों के जीवन का तरीका। लोग एक जगह पर नहीं रहते हैं लेकिन एक जगह से दूसरी जगह भ्रमण करते रहते हैं।

चरागाही खानाबदोशी : मवेशियों और भेड़-बकरी चरवाहों से जुड़ा एक सामाजिक संगठन जो चारागाहों की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान तक भ्रमण करते हैं।

ग्रिड प्रणाली : जालीदार संरचना

टेराकोटा : मिट्टी व बालू का मिश्रण जो कि मूर्तियों व खिलौने बनाने में प्रयोग होता है। यह आग में पकी लाल-भूरे रंग का होता है।

रेडियो कार्बन डेटिंग : इसे C-14 डेटिंग भी कहा जाता है। यह एक मृत कार्बनिक नमूने में रेडियो-सक्रिय आइसोटोप-14 को मापने की एक विधि है जो एक ज्ञात और गणना योग्य दर से गायब हो जाती है।

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) i ✓ ii × iii ✓ iv ×

2) भाग 5.3 देखें।

बोध प्रश्न 2

1) उपभाग 5.6.1 को देखें।

2) अंत में दिये गये पाठ-पेटिका को देखें।

3) भाग 5.5 देखें।

5.10 संदर्भ ग्रंथ

ऑलचिन, बी. एंड ऑलचिन, एफ. आर. (1982). *द राईज़ ऑफ सिविलाईजेशन इन इंडिया एंड पाकिस्तान.* केम्ब्रिजः केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रैस.

चक्रबर्ती, डी. के. (1999). *इंडियाः एन आर्क्योलोजिकल हिस्ट्री.* ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रैस.

चाईल्ड, वी. (1950), द अर्बन रवूल्यूशन. *द टाऊन प्लैनिंग रिव्यू,* 21 (1), 3-17.

घोष, ए. (1965). द इंडस सिविलाईजेशनः इट्स ओरिज़ंस, ऑथर्स, एक्सटेंट एंड क्रोनोलोजी. *इंडियन प्रिहिस्ट्री.* पूना, 113-156.

मार्शल, जॉन (1931). *मोहनजोदड़ो एंड द इंडस सिविलाईज़ेशन.* वॉल्यूम 10 लंडनः आर्थर प्रोब्सथैन.

मैकिनटोश, जेन (2008). *द ऐशियंट इंडस वैलीः न्यू पर्सपैक्टिव्स.* एबीसी-क्लियो.

पोशैल, जी. (2003). *द इंडस सिविलाईज़ेशनः ए कंटैमप्रैरी पर्सपैक्तिव.* न्यूयॉर्कः अल्टामीरा प्रैस.

राईट, रीटा पी. (2010). *द एंशियंट इंडसः* क्रैम्ब्रिज युनीवर्सिटी प्रैस.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 6 हड़प्प सभ्यता-II*

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 परिपक्व हड़प्पा सभ्यता को परिभाषित करना

6.3 आवास के प्रारूप (Settlement Patterns)

6.4 प्रमुख स्थल

- 6.4.1 सिंध में मोहनजोदड़ो
- 6.4.2 पंजाब (पाकिस्तान) में हड़प्पा
- 6.4.3 राजस्थान में कालीबंगन
- 6.4.4 हरियाणा में बनावली
- 6.4.5 गुजरात में धोलावीरा
- 6.4.6 गुजरात में लोथल

6.5 अर्थव्यवस्था

- 6.5.1 कृषि
- 6.5.2 शिल्प

6.6 जल निकासी

6.7 कला

6.8 व्यापार

6.9 समाज

6.10 धर्म

6.11 सारांश

6.12 शब्दावली

6.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.14 संदर्भ ग्रंथ

6.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम हड़प्पा सभ्यता के परिपक्व चरण, इसके अर्थ, इसकी मुख्य विशेषताओं और इससे जुड़े मुख्य स्थलों का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप निम्नलिखित के बारे में जान पाएंगे :

- हड़प्पा का परिपक्व चरण और यह प्रारंभिक हड़प्पा चरण से कैसे अलग है;
- मुख्य स्थल, उनके स्थापत्य की विशेषताएँ, नगर नियोजन, जल निकासी;
- सिंधु लिपि और इसके बीजलेखवाचन (Decipherment) की समस्याएं;
- सिंधु सभ्यता का समाज, शिल्प, व्यापार, धर्म और अर्थव्यवस्था।

* डॉ. अवंतिका शर्मा, इंद्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

6.1 प्रस्तावना

इस सभ्यता से जुड़े स्थल पाकिस्तान और उत्तर-पश्चिम भारत के बड़े हिस्से में पाए जाते हैं, और इसका एक स्थल अफ़ग़ानिस्तान में है। 2008 तक खोजे गए स्थलों की कुल संख्या 1022 थी, जिनमें से 616 भारत में और 414 पाकिस्तान में हैं। इस सभ्यता का आच्छादित क्षेत्र 680,000 और 800,000 वर्ग किलोमीटर के बीच होने का अनुमान है। इसका संयुक्त क्षेत्र मिस्र और मेसोपोटामिया से लगभग 12 गुना है, अतेव यह प्राचीन दुनिया की सबसे बड़ी सभ्यता है। हम जानते हैं कि इस सभ्यता की जड़ें हड़प्पा की प्रारंभिक संस्कृतियों में हैं, जिसके बारे में आप पिछली इकाई में विस्तार से अध्ययन कर चुके हैं। आपको यह समझने की ज़रूरत है कि प्रारम्भिक हड़प्पा चरण के साथ कई विशेषताओं को साझा करने के बावजूद परिपक्व हड़प्पा काफ़ी भिन्न है। परिपक्व चरण में कई अलग-अलग संस्कृतियों के बजाय हम इस विशाल क्षेत्र में फैली एक समान सभ्यता के अस्तित्व को देखते हैं। कोई यह तर्क दे सकता है कि इतने विशाल क्षेत्र पर इस तरह का मानकीकरण और एकरूपता प्राचीन दुनिया में पूरी तरह से अद्वितीय है।

'हड़प्पा सभ्यता' या 'सिंधु सभ्यता' नाम आरंभिक दूसरी सहस्राब्दी और तीसरी सहस्राब्दी बी. सी.ई. की शहरी, साक्षर संस्कृति को संदर्भित करता है। अपनी खोज के प्रारंभिक वर्षों में कई पुरातत्वविदों ने मेसोपोटामिया की सभ्यता के साथ इस सभ्यता की तुलना करने का प्रयास किया। अब पुरातत्वविद इसके प्रति जागरूक हैं कि सिंधु सभ्यता को मेसोपोटामिया की दृष्टि की बजाय स्वतंत्र सभ्यता के रूप में अध्ययन करने की आवश्यकता है।

यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि जब 'हड़प्पा सभ्यता' शब्द का उल्लेख किया जाता है तो इसका तात्पर्य शहरी चरण से है। अब हम हड़प्पा के परिपक्व चरण की मुख्य विशेषताओं पर चर्चा करते हैं।

6.2 परिपक्व हड़प्पा सभ्यता को परिभाषित करना

हड़प्पा संस्कृति का विकास एक लंबी जटिल प्रक्रिया थी। इसमें तीन चरण होते हैं : प्रारंभिक, परिपक्व और परवर्ती। प्रारंभिक चरण का पिछली इकाई में वर्णन किया गया है। यहाँ इस इकाई में हम परिपक्व चरण का अध्ययन करेंगे।

परिपक्व हड़प्पा चरण की विशिष्ट विशेषताओं में से एक उनकी कलाकृतियाँ और तकनीक है (पोश्हैल, 2003)। अब हमें एक नये प्रकार के मृदभांड (शैली, मिट्टी की बनावट, बर्तनों के रूप और चित्रकारी) मिलते हैं, यद्यपि पूर्व के साथ कुछ निरंतरताएं हो सकती हैं। धातु का उपयोग बढ़ रहा था और कांस्य की शुरुआत हो गई थी। नई धातु की वस्तुओं में बर्तन, कड़ाही, तांबे की पटियां, ब्लेड, कँटियां (Fishooks), उस्तरा और अन्य वस्तुयें शामिल हैं। पकी हुई ईंटों का उपयोग बहुत आम है और अब स्थलों के बीच मानकीकरण है। कठोर पत्थरों को छेद करने की जटिल प्रौद्योगिकी का विकास, मनका बनाने का विस्तार और रात-रतुवा (Carnelian) का व्यापक उपयोग दिखता है। इसके साथ ही, सभी स्थलों पर लेखन का उपयोग है। 4000 से अधिक सिंधु शिलालेख पाए गए हैं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो; चोलिस्तान में गँवेरीवाला; कच्छ में धोलावीरा; और हरियाणा में राखीगढ़ी जैसे स्थल बड़ी बस्तियाँ थीं और जनसंख्या के समूह का प्रतीक थीं।

इस चरण की मुख्य विशेषता इसकी एकरूपता है। बलूचिस्तान, पंजाब या यहां तक कि गुजरात में स्थित स्थल समान रूप की संरचनाओं को दर्शातें हैं। सभी इमारतों को 1:2:4 के अनुपात वाली ईंटों का उपयोग करके बनाया गया था। वज़न और माप की एक आम

पद्धति उपयोग में थी। मुहरों के रूपांकनों में एक ही प्रकार की प्रतिमा-विद्या (Iconography) प्रदर्शित होती है। लगभग सभी स्थल अभूतपूर्व नागरिक सुविधाओं का दावा कर सकते हैं, जैसे कि स्नानगृह के साथ विशाल कमरे वाले घर, मज़बूत सड़कें, जल निकासी की विस्तृत व्यवस्था, पानी की आपूर्ति प्रणाली। हालांकि प्रभावशाली एकता के बावजूद कुछ स्थल नगरीय नियोजन और धार्मिक मान्यताओं में कुछ अंतर दिखाते हैं। इसके अलावा, कुछ क्षेत्रों को कम एकीकृत किया गया था (मैकिंतोश, 2008)। पोश्हैल (2003) का अनुमान है कि यह संक्रमण 2600-2500 बी.सी.ई. के बीच हुआ था, लेकिन हम अभी भी उन कारकों को नहीं समझते हैं जिनके कारण यह परिवर्तन हुआ।

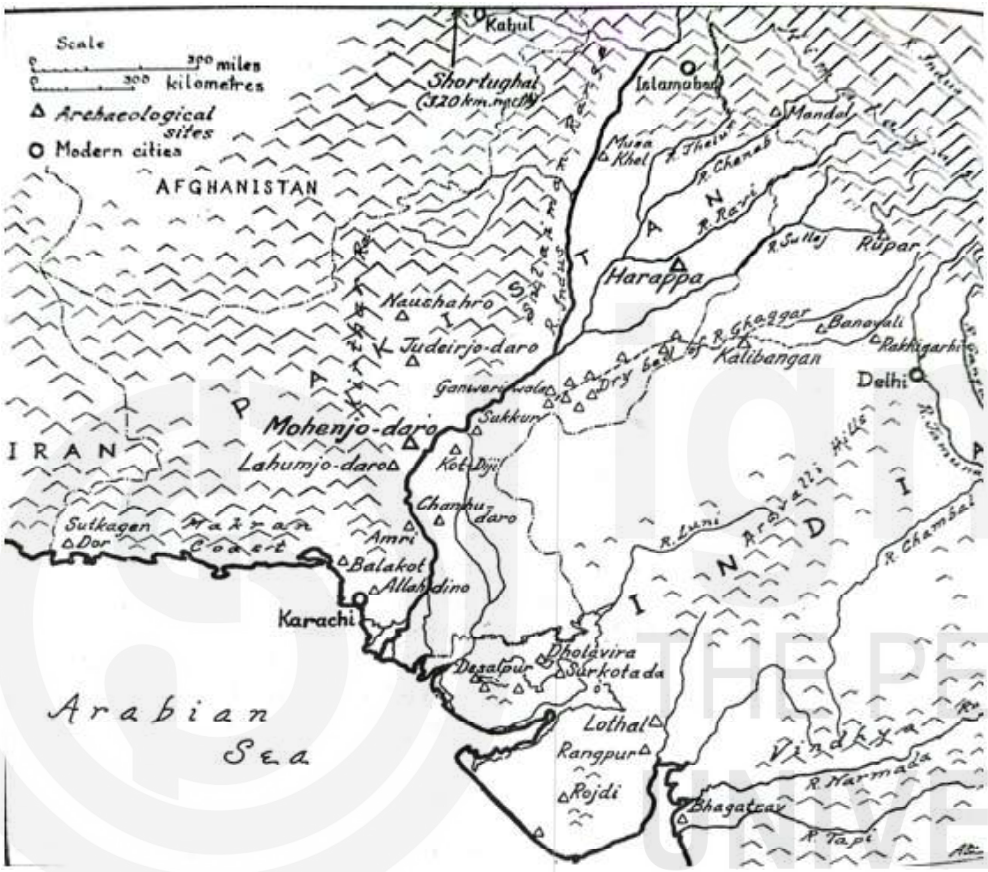

हड़प्पा सभ्यता के स्थल। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड 2, इकाई 6।

6.3 आवास के प्रारूप (Settlement Patterns)

शहरी और ग्रामीण बस्तियाँ कार्यात्मक रूप से महत्वपूर्ण तरीकों से जुड़ी हुई थीं और एक प्रकार के प्रशासनिक संगठन को इंगित करती हैं। यह तथ्य कि सिंधु सभ्यता शहरी थी स्वयमेव रूप से यह संकेत नहीं देती है कि उसकी सभी बस्तियों, बड़ी और छोटी, का स्वरूप शहरी था। भोजन के लिए शहर गाँवों पर निर्भर थे और शायद श्रम के लिए भी। शहरों ने विभिन्न प्रकार के सामानों का उत्पादन किया जो कि तेज ग्रामीण-शहरी संपर्क के परिणामस्वरूप दूर-दराज के गांवों तक पहुंचे। इसके कारण पूरी सिंधु सभ्यता की संरचनाओं में एकरूपता आ गई।

विभिन्न प्रकार की बस्तियाँ मौजूद थीं। सबसे बड़ी बस्तियों में मोहनजोदड़ो (200 हेक्टेयर से अधिक), हड़प्पा (150 हेक्टेयर से अधिक), गन्वेरीवाला (81.5 हेक्टेयर से अधिक), राखीगढ़ी (80 हेक्टेयर से अधिक), धोलावीरा (लगभग 100 हेक्टेयर) शामिल हैं। हाल ही

में अन्वेषण के दौरान पंजाब के कुछ बहुत बड़े स्थल प्रकाश में आए हैं। ये मनसा जिले में धालेवान (150 हेक्टेयर) और भटिंडा जिले में गुरनी कलां (144 हेक्टेयर), हसनपुर II (लगभग 100 हेक्टेयर), लखमीरवाला (225 हेक्टेयर), बागलियान दा ठेह (100 हेक्टेयर) हैं। अब तक पंजाब में स्थित इन स्थलों की खुदाई नहीं की गई है। बस्तियों का दूसरा पायदान मध्यम आकार का है, जो 10-15 हेक्टेयर तक होता है। ये हैं जुदिरजोदानो और कालीबंगन। फिर 5-10 हेक्टेयर की सीमा में आने वाले छोटे स्थल भी हैं। जैसे कि आमरी, लोथल, चनहुदड़ो और रोजडी। 5 हेक्टेयर से छोटी बस्तियों में अल्लाहदीनो, सुरकोटदा, नागेश्वर, नौशारो, गाज़ीशाह शामिल हैं।

कुछ तरह की योजना सभी बस्तियों के लिए सामान्य थी। बस्ती के आकार और योजना के स्तर के बीच कोई विशुद्ध सह-संबंध नहीं था। उदाहरण के लिए, लोथल का छोटा सा स्थल उच्च स्तर की योजना प्रदर्शित करता है और कालीबंगन, हालांकि दोगुने आकार का है, नहीं।

6.4 प्रमुख स्थल

इस भाग में हम इस सभ्यता के कुछ स्थलों को लेते हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, इस चरण की मुख्य विशेषताओं में से एक इस संस्कृति में इसकी पूर्ण एकरूपता है। सिंधु, पंजाब या राजस्थान में स्थित भवन 1:2:4 के अनुपात वाली ईंटों का उपयोग करके बनाए गए थे। घर की ईंटों के आयाम 7×14×28 से.मी. थे और शहर की दीवार के लिए यह 10×20×40 से.मी. था। नगरीय योजना (town planning) में अधिकांश बस्तियों को दो क्षेत्रों में विभाजित किया गया थाः नगर-दुर्ग (Citadel) और निचला नगर। दोनों दीवार से घिरे या किलाबंद थे। नगर-दुर्ग टीले में हम अक्सर महत्वपूर्ण इमारतों और कुछ सांयोगिक निवासों को पाते हैं। अधिकांश निवास और कार्यशालाएं निचले शहर में स्थित थे। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो और कालीबंगन जैसे कुछ स्थलों में निचले शहर से कुछ दूरी पर अक्सर नगर-दुर्ग का निर्माण किया गया था, जबकि अन्य स्थलों, जैसे कि बनावली, लोथल और धोलावीरा में दोनों एक ही परिसर में स्थित थे। हड़प्पा बस्तियों की सबसे प्रभावशाली विशेषताओं में से एक उनकी जल निकासी व्यवस्था है।

6.4.1 सिंध में मोहनजोदड़ो

खुदाई की जाने वाले पहली बस्तियों में से एक, मोहनजोदड़ो सिंधु नदी के पश्चिम में स्थित है। इसका विस्तार क्षेत्र लगभग 200 हेक्टेयर है। स्थल में दो टीलें हैं। एक पश्चिमी नगर-दुर्ग और दूसरा पूर्वी निचला शहर। दोनों टीले एक कृत्रिम चबूतरे पर बनाए गए हैं और इनकी किलाबंदी की गई है। इसकी आबादी लगभग 20,000 से 40,000 लोगों की आंकी गई हैं।

यहां कुछ प्रमुख इमारतों की खोज की गई थी। सबसे प्रसिद्ध एक संरचना है जिसे महान स्नानागार (The Great Bath) के रूप में जाना जाता है (चित्र 6.1)।

यह लगभग 14.5 मीटर लंबाई में, 7 मीटर चौड़ाई में और 2.4 मीटर गहराई में है। यह जिप्सम गारे (Mortar) में स्थापित ईंटों से बना है। फर्श और उस तक जाने वाली सीढ़ियों को डामर (Bitumen) की एक परत के प्रयोग के माध्यम से जलरोधक बनाया गया था। इसके अलावा, फर्श पर दक्षिण-पश्चिम में स्थित एक छोटी सी प्रवेशिका नाली थी जो एक निकास नाली से जुड़ी थी। ऐसा पानी को नियमित करने के लिए किया गया था। दक्षिण की ओर जहां प्रवेश द्वार लगता था, को छोड़कर सभी तरफ़ ईंटों के स्तम्बों से स्नानागार

घिरा हुआ लगता है। स्नानागार का उद्देश्य बहस का मुद्दा है। कई लोगों के अनुसार यह अनुष्ठानिक प्रक्षालन के लिए उपयोग होता था, जबकि अन्य लोग इसे सार्वजनिक ताल मानते हैं।

महान स्नानागार से सटी कुछ संरचनाओं की पहचान 'पुरोहित परिसर' और 'अन्न-कोठार' (Granary) के रूप में की गई है। टीले के दक्षिणी किनारे पर एक चौकोर संरचना की व्याख्या 'सभा-भवन' (Assembly Hall) के रूप में की गई है जहाँ निवासी महत्वपूर्ण मामलों पर चर्चा करने के लिए एकत्रित होते थे। सामान्य तौर पर, पूर्वी टीले पर बने घरों में कमरों से घिरा एक आंगन है। कमरों की संख्या भिन्न दिखती है। दीवारों की मोटाई इंगित करती है कि कुछ घर दो मंजिला थे। छोटे घर कार्यशाला के रूप में भी कार्य कर सकते थे। अधिकांश घरों में शौचालय थे जो शहर की जल निकासी प्रणाली से अच्छी तरह से जुड़े हुए थे। पानी के लिए शहर में लगभग 700 कुएँ थे। अनेक घरों में निजी कुएँ भी थे।

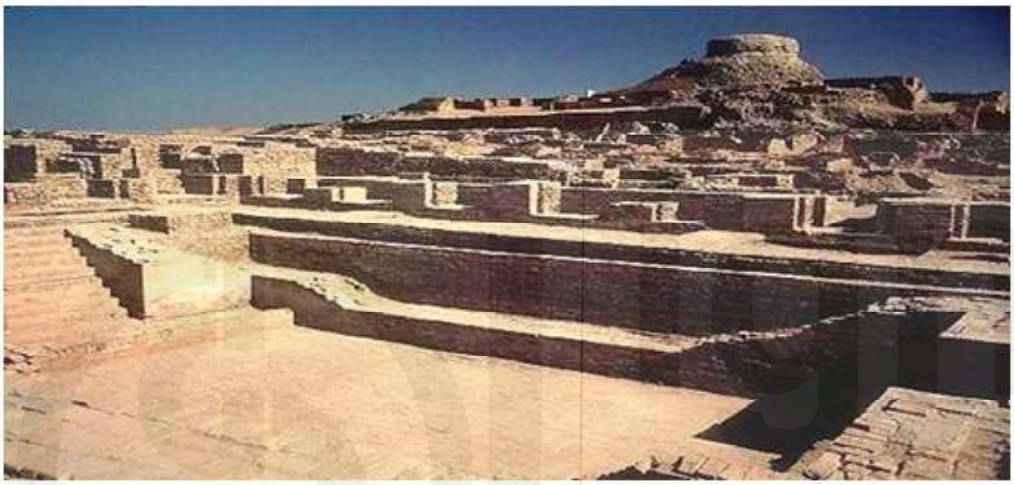

चित्र 6.1: मोहनजोदड़ो की अग्रभूमि में महान स्नानागार। साभार : एम. इमरान, इंगलिश विकिपीडिया। स्रोत: विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Great_Bath_Mohenjodaro#/media/File:Mohenjodaro_Sindh.jpeg)।

6.4.2 पंजाब (पाकिस्तान) में हड़प्पा

यह स्थल रावी नदी के सूखे नदी तल के पास स्थित है। नगर-दुर्ग क्षेत्र मोटी मिट्टी की ईंटों की दीवार से घिरा हुआ था। इसके उत्तर में एक और टीला है जिसकी व्हीलर ने एक अन्न-कोठार (granary) के रूप में पहचान की है (चित्र 6.2)। केंद्रीय गलियारे द्वारा अलग किए गए दो खंड हैं। प्रत्येक खंड में लगभग पाँच कमरे थे। आज जो दीवारें बची हैं उनमें कुछ अंतराल हैं। यह व्हीलर के अनुसार अनाज को ताज़ा रखने के लिए वायु परिसंचरण प्रदान करता था। रोमन सभ्यता के अन्न भंडारों में इसी तरह की एक समान तकनीक को अपनाया गया था। इस परिसर के दक्षिण में पकी हुई ईंटों के वृत्ताकार चबूतरों की एक श्रृंखला की खोज की गई है। वे आज भारत में पाए जाने वाले खलिहानों (threshing floors) से घनिष्ठ रूप से मिलते जुलते हैं। जले हुए गेहूं और भूसी उतारी जौ दरारों में पाए गए हैं। यह इस तथ्य की पुष्टि करता है कि यह संरचना एक अन्न-कोठार थी।

6.4.3 राजस्थान में कालीबंगन

यह स्थल अब सूख चुकी घग्गर नदी के पश्चिम में स्थित है। स्थल पर पश्चिम में एक उच्च नगर-दुर्ग का टीला और पूर्व में एक निचला आवासीय टीला भी है। अंदर, नगर-दुर्ग को एक दीवार द्वारा उत्तरी और दक्षिणी क्षेत्र में विभाजित किया गया है। उत्तरी क्षेत्र में हमें कुछ घर

और एक सड़क प्राप्त हुई है। दक्षिणी क्षेत्र में कोई आवासीय संरचना नहीं है। इसके बजाय मिट्टी की ईंटों के चबूतरों की एक श्रृंखला है। चबूतरों में से एक में कुछ वेदियाँ हैं जिनमें राख, लकड़ी का कोयला और चिकनी मिट्टी का प्रस्तर पट्ट मिला है। इसके बगल में कुछ स्नान करने वाले चबूतरे हैं जो एक कड़ियोंदार नाले से जुड़े हैं। संपूर्ण परिसर एक बलि संबंधी पंथ के अभ्यास का संकेत देता है, हालांकि यह विवादित है।

पूर्वी निचले टीले के अवशेषों में भी अग्नि वेदियों की खोज की गई है। कुछ घर शायद दो मंजिला थे। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, उनके पास आग की अंडाकार वेदियाँ थीं। ये चूल्हे थे या बलि के गर्त, यह पता नहीं लगाया जा सकता है।

चित्र 6.2: हड़प्पा के एफ़ निर्धारित टीले (Mound F) में अन्न-कोठार और विशाल कक्ष (Great Hall) का दृश्य। साभार : मोहम्मद बिन नवीद। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikipedia.org/wiki/File:Another view of Granary and Great Hall on Mound F.JG)।

6.4.4 हरियाणा में बनावली

यह स्थल सूखी रंगोई नदी के दाईं ओर स्थित है। यह नौ हेक्टेयर के क्षेत्र को आच्छादित करने वाली आयताकार योजना को दर्शाता है। संपूर्ण स्थल किलाबंद था। अब तक सर्वेक्षित किए गए स्थलों के विपरीत यहां का नगर-दुर्ग व निचला शहर एक ही परिसर में स्थित है। आवासों में नहाने के चबूतरे, कुएं और नालियां हैं। एक बहु-कक्षीय घर, जो मुहरों और वज़नों (seals and weights) का प्रमाण देता है, को एक 'व्यापारी के घर' के रूप में पहचाना गया है।

6.4.5 गुजरात में धोलावीरा

यह कच्छ के रण में एक द्वीप पर स्थित है। कई मायनों में, यह स्थल हड़प्पा बस्तियों में काफ़ी अनोखा है और इसकी अवस्थिति ने शायद इसकी नगरीय योजना के कई पहलुओं को प्रभावित किया। उदाहरण के लिए, ईंटों के बजाय यहां की इमारतें मुख्य रूप से स्थानीय रूप से उपलब्ध बलुआ पत्थर का उपयोग करके बनाई गई हैं। स्थल को उन व्यवस्थाओं के लिए भी जाना जाता है जो पानी के संरक्षण के लिए बनाई गई हैं (चित्र 6.3)।

चित्र 6.3: धोलावीरा। कृत्रिम रूप से निर्मित जलाशय में पानी के स्तर तक पहुंचने के लिए निर्मित बावड़ी। साभारः ललित गज्जर। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Dholavira#/media/File:DHOLAVIRA SITE (24). Jpg)।

शहर की योजना अनूठी है। दो के बजाय इसमें तीन निर्धारित क्षेत्र हैं : नगर-दुर्ग परिसर, मध्य शहर और एक ही किलाबंद परिसर के भीतर स्थित एक निचला शहर। प्राचीर दुर्ग क्षेत्र के कमरों में से एक में एक स्खलित सूचना पट्ट (signboard) मिला है (चित्र 6.4)। अक्षर सफेद कुलनार (Gypsum) से बने हैं और एक लकड़ी के पटल पर अंकित हैं।

चित्र 6.4: धोलावीरा में नगर-दुर्ग के उत्तरी द्वार के पास खोजा गया सिंधु संकेताक्षरों में अंकित 'सूचना पट्ट'। साभार : सियाजकक। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Indus_Valley_Civilisation#/media/File:The_'Ten Indus Scripts' discovered near the northern gateway of the Dholavira citadel.jpg.) ।

पानी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए निचले शहर के निवासियों ने जलाशयों को ज़मीनी चट्टानें काट कर बनाया। लगभग 16 ऐसे जलाशयों (चित्र 6.5) की खोज की गई है।

चित्र 6.5: धोलावीरा। साभारः रामाज़ ऐरो। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/Dholavira#/media/File:Dholavira1.JPG)।

6.4.6 गुजरात में लोथल

यह हड़प्पा का एक बंदरगाह शहर है। यह सौराष्ट्र प्रायद्वीप में एक निचले दहाना (Delta) क्षेत्र में स्थित है। यह माना जाता है कि समुद्र एक समय इस स्थल के अधिक समीप था।

चित्र 6.6: लोथल बंदरगाह। स्रोत :विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikipedia.org/wiki/File:Lothal_dock.jpg)

नगर-दुर्ग और निचला शहर, दोनों एक ही परिसर के अंदर स्थित हैं। नगर-दुर्ग में एक इमारत से लगभग 65 पकी मिट्टी (Terracotta) मुहरों पर सरकंडा, बुने हुए रेशों, रस्सों और चटाई के छापों को प्राप्त किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि यह एक गोदाम या माल भरने का स्थान था। यह व्यापार में इस स्थल की सक्रिय भागीदारी को दर्शाता है। इसकी शहर के पूर्व में स्थित एक अन्य संरचना के द्वारा भी पुष्टि की गई है जिसे बंदरगाह के रूप में पहचाना गया है (चित्र 6.6)। यह भी एक पकाई हुई ईंटों की दीवार से घिरा हुआ है। यह पानी को नियमित करने के लिए दो प्रवेशिकाओं और निकास की नालियों (spill channels) को दर्शाता है। मदों (माल) को उतारने में मदद के लिए पश्चिम में एक अतिरिक्त चबूतरे का निर्माण किया गया था।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित स्थलों को उनकी वर्तमान भौगोलिक स्थिति से मिलाएँ :

i)	हड़प्पा	क)	राजस्थान
ii)	कालीबंगन	ख)	सिंध (पाकिस्तान)
iii)	मोहनजोदड़ो	ग)	मकरान तट (पाकिस्तान-ईरान सीमा)
iv)	सुत्कागनडोर	घ)	पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान)

2) हड़प्पा सभ्यता के दो मुख्य स्थलों की चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

3) आप यह कैसे सुनिश्चित करेंगे कि लोथल में पाया गया ढांचा एक बंदरगाह है?

.....

.....

.....

.....

.....

6.5 अर्थव्यवस्था

हड़प्पा सभ्यता का भू-दृश्य विविधता भरा था। इसमें जलोढ़ (कछारी) मैदान, पहाड़, पठार और समुद्री तट शामिल थे। यह इलाका अधिशेष पैदा करने के लिए काफ़ी समृद्ध था जो शहरीकरण के लिए महत्वपूर्ण था। सिंधु लोगों के जीवन निर्वाह के तरीके पुनर्निर्मित करने के लिए जिन मुख्य स्रोतों का उपयोग किया जाता है वे हैं पौधों के अवशेष, जानवरों की हड्डियाँ, कलाकृतियाँ, मुहरों और मिट्टी के बर्तनों पर रूपांकन और आधुनिक क्रियाकलापों के साथ उनकी अनुरूपतायें।

एक पहलू जो प्रारंभिक हड़प्पा से परिपक्व हड़प्पा चरण को अलग करता है, वह आर्थिक गतिविधियों का पैमाना है। रीटा राइट (2010) इस अवधि को सघनता, विविधीकरण और विशेषज्ञता के चरण के रूप में देखती हैं। सघनता का अभिप्राय कृषि और शिल्प दोनों के उत्पादन में वृद्धि से है। विविधीकरण का तात्पर्य उत्पादों की एक विस्तृत विविधता का विकास है। इन दो विकासों ने विशेषज्ञता को प्रोत्साहित किया जिसका अर्थ है व्यक्तियों का एक आर्थिक गतिविधि के लिए समय समर्पित करना। उदाहरण के लिए, प्रारंभिक हड़प्पा काल में एक किसान अंशकालिक पशु चिकित्सक या अंशकालिक बुनकर भी हो सकता था। कृषि में वृद्धि का यह अभिप्राय हो सकता है कि किसान अब खेती के लिए अधिक समय और ऊर्जा समर्पित कर रहा था, अन्य गतिविधियों को वह दूसरे पूर्णकालिक विशेषज्ञों के लिए छोड़ रहा था। एक और विकास कई शिल्पों में बेहतर तकनीक को अपनाना था। आइए हम विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों का सर्वेक्षण करें।

6.5.1 कृषि

हड़प्पा सभ्यता में रबी या सर्दी की फसलों की खेती एक प्रमुख अभ्यास लगती है। मुख्य रबी फसलें गेहूँ, जौ, मटर, छोले, तिल, सरसों और मसूर थीं। ख़रीफ़ या ग्रीष्मकालीन फसलों, जैसे बाजरा और चावल, की खेती में वृद्धि इस चरण को प्रारंभिक हड़प्पा से अलग करती है (राइट, 2010)। लोथल, रोजडी, कुंटासी, सुरकोटदा और शिकारपुर जैसे कई स्थलों से बाजरा प्राप्त किया गया है। गुजरात के बाहर, इसकी खेती हड़प्पा, कुणाल और संघोल में भी की जाती थी। चावल को हड़प्पा, कुणाल, कालीबंगन, लोथल और रंगपुर से जाना जाता है।

उपयोग किए जाने वाले औज़ारों में हम बनावली और बहावलपुर से एक पकी मिट्टी (Terracotta) के हल के नमूने के बारे में जानते हैं। कालीबंगन में एक जुते हुए खेत का पता चला है। हालांकि यह प्रारंभिक हड़प्पा चरण का है, लेकिन हम निश्चित रूप से समझ सकते हैं कि यह कार्य बाद के समय में भी जारी रहा। कालीबंगन के खेतों में समकोण पर एक-दूसरे को काटते हुए हल-रेखाओं (Furrows) के समुच्चय होते थे। इस प्रकार एक जालीदार प्रारूप (grid pattern) बनता है। संभव है कि एक ही खेत में दो फसलें उगाई

जाती थीं। वर्तमान समय में सरसों और कुलथी (चने की दाल) अलग-अलग हल-रेखाओं में एक साथ उगाए जाते हैं।

कई स्थलों से तांबे की दरांतियाँ प्राप्त हुई हैं। सिंचाई तकनीकों में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्नता अवश्य रही होगी। सिंध में यह संभव है कि सिंधु में बाढ़ का उपयोग सिंचाई प्रयोजनों के लिए किया जाता था, एक तकनीक जिसे चादर-बाढ़ (Sheet-Flooding) कहा जाता है। इससे शहरों का निर्माण कृत्रिम चबूतरों पर होने वाली बात को समझा जा सकता है, ताकि उन्हें बाढ़ से बचाया जा सके। घग्गर-हकरा के लिए नहर सिंचाई का अस्तित्व प्रस्तावित किया गया है, हालांकि यह विवादास्पद है। बलूचिस्तान के शुष्क क्षेत्रों में *गबरबंद* जैसी संरचनाओं के इस्तेमाल का सुझाव दिया गया है। इन संरचनाओं का उपयोग वर्तमान क्षेत्र में पहाड़ियों के नीचे आने वाले पानी का अभिग्रहण करने या इस प्रवाह को धीमा करने के लिए किया जाता है। गुजरात में हम पहले ही धोलावीरा जैसी जगहों पर जलाशयों के अस्तित्व का उल्लेख कर चुके हैं।

स्थलों पर पाए जाने वाले पालतू जानवरों में मवेशी, भैंस, भेड़, बकरी, सुअर, ऊंट, हाथी, कुत्ता, बिल्ली, गधा और अन्य शामिल हैं। मवेशियों का मांस पंसद किया जाता था। मवेशियों और भैंस ने कृषि में मदद की होगी और भारवाहक जानवरों के रूप में सेवा दी होगी। घोड़े की उपस्थिति विवादास्पद मानी जाती है। जानवरों का शिकार एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी। शिकार किए गए जानवरों में जंगली भैंस, हिरण, जंगली सुअर, गधा, सियार, कृंतक (चूहा, गिलहरी जैसे कतरने वाले जानवर) और खरगोश शामिल हैं। हड़प्पा के स्थल ने समुद्री कैटफिश (catfish) के सबूत दिए हैं। इसलिए ऐसा लगता है कि तटीय समुदायों ने अंतर्देशीय बस्तियों के साथ सूखी मछली का व्यापार किया होगा। भोजन संग्रहण का भी अभ्यास किया गया। गंगा-यमुना दोआब में जंगली चावल का सेवन किया जाता था। सुरकोटदा में बरामद किए गए अधिकांश बीज जंगली किस्म के हैं जिनमें बादाम (nuts), आदि घासें और तृण (weeds) शामिल हैं।

हड़प्पावासी इस प्रकार कई जीवन निर्वाह रणनीतियों पर निर्भर थे। ऐसा जोखिम को कम करने के लिए किया गया था। यदि फसलें विफल रहीं तो वे शिकार पर निर्भर हो सकते थे।

6.5.2 शिल्प

परिपक्व अवधि में शिल्प की एक विस्तृत श्रृंखला का अभ्यास किया गया था। हम पूर्ववर्ती अवधि से तकनीकी प्रक्रियाओं के संदर्भ में गहनता को देखते हैं। कच्चे माल के उपयोग की सीमा के बावजूद शिल्प उत्पादन में विस्तार किया गया। पुरातात्विक साक्ष्यों से ऐसा लगता है कि हड़प्पावासी कांस्य की तुलना में तांबे का उपयोग अधिक करते थे।

मृदभांड

हड़प्पा के शहरों में मिलने वाले मृदभांडों में सबसे सामान्य लाल बर्तन हैं। ये पहिये पर बने और पके मृदभांड हैं। इसमें सादे और सजाये हुए बर्तन हैं। चित्रों के लिए लाल रंग का उत्पादन करने के लिए गेरू का उपयोग किया गया था और काले मैंगनीज़ (Manganese) के साथ गहरे लाल-भूरे रंग के लोहे के ऑक्साइड को मिलाकर काले रंग को प्रदर्शित किया गया था। चित्रकला या रूपांकनों को काले रंग में बनाया जाता था और ज़्यादातर में ज्यामितीय या प्राकृतिक रेखाचित्र (designs) हैं। इनमें पीपल की पत्तियां, मछली के शल्क और अंतर्निभाजित वृत्त शामिल हैं जो प्रारंभिक हड़प्पा चरण से जारी रहे। मृदभांड साधार तश्तरी (dish-on-stand), एस रेखाचित्र (S-profile) नुमा फूलदान, घुंडी सजावट वाले

छोटे बर्तन, नुकीले आधार पर टिके प्याले जैसी आकृतियों में हैं। मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, नौशारो और चनहुदड़ो में मृदभांडों की भट्टियाँ पाए गई हैं।

धातुकर्म

हड़प्पा वासियों को तांबा, सोना और चांदी धातु कर्म के बारे में पता था। तांबे का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता था और यह हथियारों के रूप में हैं। तांबे का प्रयोग कृषि उपकरणों जैसे दरांती, बढ़ईगिरी के उपकरण जैसे छेनी और आभूषणों जैसे सुरमासिलाइयों, अंगूठियों, चूड़ियों, कर्णफूलों और विविध प्रकार की वस्तुओं जैसे मछली पकड़ने वाले कांटों, सुइयों, तवा (scale-pan) और मूर्तियों के रूप में भी मिलता है (चित्र 6.7)। कई बार, इसके विभिन्न संयोजनों से क़लई/राँगा (Tin), शंखिया (Arsenic), सीसा, गिलट (Nickel) और जस्ता जैसी मिश्रधातुएं बनायी जाती थीं। इन वस्तुओं के अध्ययन से पता चलता है कि हड़प्पा वासियों को लोहारी, ग़रकी (Sinking), धातु को गरम या ठंडा करके जोड़ना (hot and cold welding) जैसी तकनीकें पता थीं। वस्तुओं को ज़्यादातर पॉलिश किया गया है। लोथल में 16 तांबे की भट्टियाँ मिली हैं। मोहनजोदड़ो के एक ईंटों से बने गड्ढे में बड़ी मात्रा में कॉपर ऑक्साइड की खोज की गई है।

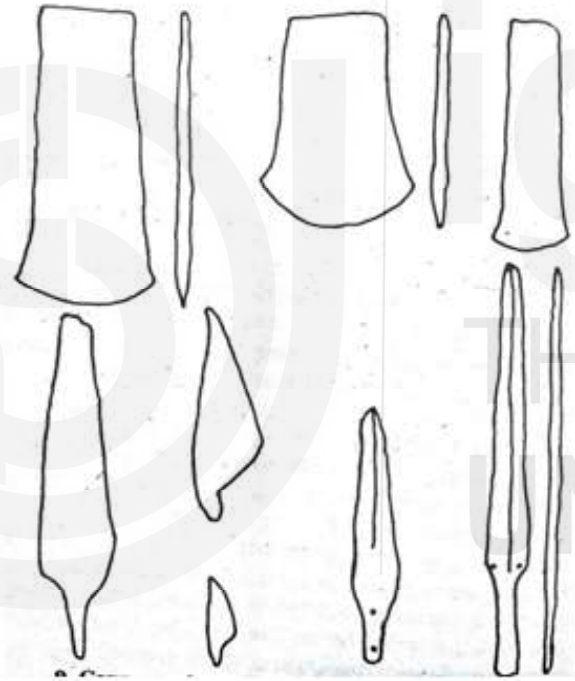

चित्र 6.7: हड़प्पा वासियों द्वारा प्रयुक्त तांबे और कांस्य के उपकरण। स्रोत: ई.एच.आई.-02, खंड 2, इकाई 6।

इनके अलावा, हड़प्पावासी सोने और चांदी के आभूषणों का भी निर्माण करते थे। इन्हें मोहनजोदड़ो, हड़प्पा और अल्लाहदीनों से प्राप्त किया गया है।

मनका उत्पादन

हड़प्पा वासियों द्वारा निर्मित सबसे प्रसिद्ध कलाकृतियाँ उनके मनके थे। इनमें कुछ, जैसे इंद्रगोप (Carnelian) के मनके, निर्यात की एक महत्वपूर्ण वस्तु थे। कीमती धातुओं के मनकों और अर्ध-कीमती पत्थरों जैसे गोमेद (Agate), सूर्यकांत मणि (Jasper), शैलखटी (Stealite) और लाजवर्द (Lapis-Lazuli) के मनके बनाने की जानकारी उपलब्ध थी। हमारे पास पकी मिट्टी (Terracotta), हड्डी, प्रकाचित मिट्टी (Faience) और सीप के मनके भी

हैं। परिपक्व चरण में सबसे महत्वपूर्ण विकास कठोर अर्ध-कीमती पत्थरों को छिद्रित करने के लिए सख़्त बेधनी (hard drill) का उपयोग था (पोश्हैल, 2003)। अन्य तकनीकों में शामिल था अपेक्षित आकार के लिए सामग्री का शल्कन (flaking) और चीरना (sawing) और उसे सही रंग प्रदान करने के लिए गर्म करना। प्रसिद्ध 36 लंबे, बेलनाकार, नलीदार इंद्रगोप (Carnelian) से बने मनकों के उत्पादन में 480 दिल लग सकते थे। इसका तात्पर्य है कि यह शिल्प एक अति विशिष्ट गतिविधि थी। मोहनजोदड़ो, चुनहुदड़ो और लोथल से मनके बनाने की कार्यशालाएँ बरामद हुई हैं।

मिट्टी की प्रकाचित वस्तुयें (Faience)

कई हड़प्पा स्थलों से मनकों, चूड़ियों, कर्णफूलों, मूर्तियों के रूप में प्रकाचित मिट्टी की अनेक वस्तुओं को प्राप्त किया गया है। ये बिल्लौर (Quartz) नामक चमकीले पत्थर से निर्मित एक कृत्रिम सामग्री से बनी हैं। इसकी तकनीक की जटिलता को देखते हुए केनोयर (2000) ने इसे समाज के अभिजात/उत्कृष्ट वर्ग के उपयोग की वस्तु कहा है।

पत्थर (Stoneware) की चुड़ियाँ

केनोयर के अनुसार यह एक अति विशिष्ट वस्तु है जो शासक वर्ग के साथ निकटता से जुड़ी हो सकती है। कुछ कारणों से, इन चूड़ियों की खोज केवल पाकिस्तान के स्थलों से की गई है। ये स्थल हैं : मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, बालाकोट और नौशारो। पत्थर के पात्र (Stoneware) शब्द भ्रामक हैं क्योंकि वस्तुयें पत्थर की नहीं बल्कि पकी मिट्टी (Terracotta) की बनी हैं। बारीक गुंदी मिट्टी को 1050-1100 डिग्री तक के उच्च तापमान पर गरम किया गया था। इन्हें अभिजात वर्ग की माना जाता है और यह इनकी खोज की प्रकृति के कारण है। इन्हें सिंधु मुहरों से सील किए गए विशेष कनस्तरों में प्राप्त किया गया है। अन्य चूड़ियों के विपरीत, ये अभिलेखित हैं या इन्हें कुम्हारों द्वारा चिन्हित किया गया है। दिलीप चक्रबर्ती (2006), हालांकि, बताते हैं कि नौशारो जैसे छोटे स्थलों में इनका मिलना कुलीन वर्ग के साथ जुड़े होने के इस दावे का समर्थन नहीं कर सकता।

पाषाण उपकरण उद्योग

धातुओं के आगमन से पत्थर के औज़ारों का अंत नहीं दिखता। हड़प्पावासी पत्थर के ब्लेडों और छोटे, सूक्ष्म ब्लेडों का इस्तेमाल करते रहे। बिल्लौर (Chert) एक महत्वपूर्ण कच्चा माल बना रहा। इन्हें बनाने वाली कई कार्यशालाएँ उत्तरी सिंध में सुक्कुर-रोहड़ी पहाड़ियों के पास स्थित थीं। प्रत्येक कार्यशाला में एक विशेष कार्य होता था। कुछ निर्मित ब्लेड 8 से.मी. और उससे भी लंबे थे। दूसरों ने उन्हें छोटे, सूक्ष्म ब्लेडों (bladelets) में बदलने के लिए अपशिष्ट मूल भाग (Core) पर काम किया। सिंध के अलावा, गुजरात में लोथल जैसे स्थल भी स्थानीय स्तर पर उपलब्ध पत्थर के ब्लेडों का निर्माण करते रहे (चित्र 6.8)।

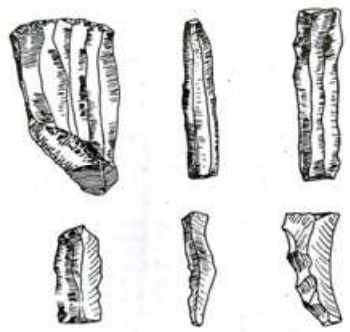

चित्र 6.8: पाषाण ब्लेड औज़ार (मोहनजोदड़ो)। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड 2, इकाई 6।

सीप प्रौद्योगिकी (Shell-Processing)

चूड़ियों, करछुल, चम्मचों, जड़ने के टुकड़ों, सजावटी वस्तुओं की एक विस्तृत विविधता सिंधु स्थलों से प्राप्त की गई है। ये मकरान, कच्छ और खंभात तटों में शंख से निर्मित हैं। ये मकरान तट से बड़ी सीपियों (clam shells) और कच्छ और शायद ओमान से चाइकोरियस सीप (Chicoreus) और फ़ासियोलारिया सीप (Fasciolaria) से बने पाए गए हैं। सीप की वस्तुओं का निर्माण बालाकोट, नागेश्वर और कुंतासी में किया जाता था, वहीं कुछ कार्यशालाओं को हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे आंतरिक स्थलों में भी खोजा गया है। इसका तात्पर्य यह है कि कच्चे रूप में सीप अत्यधिक मूल्यवान था और एक महत्वपूर्ण व्यापार वस्तु था (राइट, 2010)।

शैलखटी (Stealite)

शैलखटी का उपयोग मुख्य रूप से मुहरों (seals) के निर्माण में किया जाता था (चित्र 6.9)।

चित्र 6.9: हड़प्पा की मुहरें। साभार : वर्ल्ड इमेजिंग। स्रोत: विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:IndusValleySeals.JPG)।

मुहरें बनाने की कार्यशालाएं हड़प्पा और लोथल से जानी जाती हैं (लाहिड़ी, 1992)। छोटे जानवरों जैसे छोटे सींग वाले बैल, भैंस, बैल, गैंडे, बाघ, मगरमच्छ को मुहरों पर चित्रित किया गया है। हमें कल्पित जानवरों का चित्रण भी मिलता है, जैसे एक सींग वाला पशु (Unicorn), सींग वाला बाघ, सींग वाला हाथी। जबकि अधिकांश नमूने चौकोर हैं, लगभग 10 प्रतिशत आयताकार पाए गए हैं। हम मुहरों के प्रयोग के बारे में संक्षेप में टिप्पणी कर सकते हैं। समकालीन सभ्यता में, लंबी दूरी के व्यापार पर माल सुरक्षित करने के लिए मुहरों का उपयोग किया जाता है। सील किए गए गट्ठरों को केवल गंतव्य पर खोला जा सकता था, जो सामान को छेड़छाड़ से बचाता था। लोथल में अनेक मुहरें गोदाम में मिली हैं। यह इंगित करता है कि सिंधु मुहरों का एक समान उद्देश्य था। मनकों के उत्पादन में भी शैलखटी का उपयोग किया जाता था। मुख्य कार्यशालाएं नौशारो, मोहनजोदड़ो और चनहुदड़ो में स्थित थीं (लाहिड़ी, 1992)।

भार और मापतौल

हड़प्पावासी भार और माप की एक मानकीकृत पद्धति का उपयोग करते थे। अधिकांश माप घनाकार (cubical) थे और बिल्लौर (Chert) से बने थे। हमारे पास उत्कृष्ट गोमेद (Agate) और सूर्यकांत मणि (Jasper) से बने कुछ नमूने भी हैं। वज़न 0.871 ग्राम के एक से चौसठ

गुणकों के रूप में बढ़ते थे। रैखिक माप के लिए हमें मोहनजोदड़ो, लोथल और हड़प्पा से सीप, हाथी दांत और तांबे से बने मापकों (scales) के बारे में पता चलता है।

6.6 जल निकासी

हड़प्पा बस्तियों की सबसे प्रभावशाली विशेषताओं में से एक उनकी जल निकासी व्यवस्था है। हड़प्पा, कालीबंगन, नौशारो, चनहुदड़ो, अल्लाहदीनो, धोलावीरा, लोथल, मोहनजोदड़ो जैसे स्थलों ने विस्तृत जल निकासी सुविधाओं के प्रमाण दिए हैं। विस्तृत जल निकासी पद्धति की विशिष्ट विशेषताओं में घरों के अंदर अपशिष्ट जल के प्रबंधन, भीतरी नालियों, दीवारों में ऊर्ध्वाधर नालियों, दीवारों से होकर गुज़रती और गलियों में खुलती नालियों, गुसलखानों से निकलती और बाहरी सड़कों तक जाती नालियों आदि को शामिल किया गया है (पोश्हैल, 2003)। सभी स्थलों पर गलियों की नालियाँ पकी हुई ईंटों से बनी थीं। अल्लाहदीनो में पाई गई नालियाँ पत्थर की हैं। हमारे पास मोहनजोदड़ो में नालियों के तल में कुलनार (Gypsum) और चूने के लेप के उपयोग के भी सबूत हैं। वास्तव में, मोहनजोदड़ो में प्रारंभिक हड़प्पा काल और संक्रमणकालीन चरण, दोनों की वैशिष्ट्य नालियां पाई गई हैं। प्रत्येक निर्माण अवधि के दौरान नालियों को ऊँचा उठाया गया।

अधिकतर नालियाँ ईंट या पत्थर से ढकी हुई थीं। अपरिष्कृत तलछट को नालियों में जाने से रोकने के लिए जल निकासी प्रणाली में छोटे-छोटे तलछट ताल और जाल बनाए गए थे। इस तलछट को समय-समय पर एकत्रित किया जाता था।

घरों में आमतौर पर स्नानागार बनाए जाते थे। चबूतरे की ढलान, फर्श पर ईंटें, चबूतरे के चारों ओर उठाई गई किनारी (rim), फर्श को प्रदान की गई निर्बाध परिसज्जा, चूने के लेप की परत और ईंट की धूल का उपयोग, सभी इन स्नानगृहों को बनाने में बरती गई अत्यंत सावधानी का संकेत देते हैं।

6.7 कला

अपने समकालीनों की तुलना में सिंधु सभ्यता कला में विशेष रूप से समृद्ध नहीं है। हमने कुछ मानव और पशुओं की लघुमूर्तियों को बरामद किया है। अधिकांश मानव लघुमूर्तियाँ हस्तनिर्मित थीं और कांस्य, पकी मिट्टी (Terracotta), शैलखटी और प्रकाचित मिट्टी (Faience) से बनाई गई थीं। हमारे पास पुरुष और स्त्री दोनों की लघुमूर्तियाँ हैं जिनमें से कुछ के लिंग की पहचान नहीं हो पा रही है। स्त्री की मूर्तियों को विस्तृत आभूषणों और केश सज्जा के साथ बनाया गया है। इनमें से अनेक हड़प्पा, मोहनजोदड़ो और बनावली से प्राप्त की गई हैं। लोथल में कुछ अपरिष्कृत नमूनों की खोज की गई है। सबसे प्रसिद्ध एक कांस्य लघुमूर्ति है जिसे नर्तकी ('Dancing Girl') कहा जाता है। इसकी लंबाई लगभग 11.25 से.मी. है। इसमें एक इकहरी स्त्री को दर्शाया गया है जिसका एक हाथ उसके बायें घुटने के थोड़ा ऊपर और दूसरा उसके कूल्हे पर टिका हुआ है। बायां हाथ पूरी तरह से चूड़ियों से ढका हुआ है जबकि दाएं में केवल चार कंगन हैं। वह तीन लोलकों वाला एक हार भी पहने हुये है। उसकी आँखें आधी बंद हैं और बाल एक जूड़े में बंधे हैं (चित्र 6.10)। उसकी भंगिमा से किसी भी नृत्य मुद्रा का संकेत नहीं मिलता है, लेकिन जॉन मार्शल द्वारा उसे 'Dancing Girl' का नाम दिया गया क्योंकि उसने उसे नृर्तकियों/नृत्य बालाओं की याद दिलाई। एक अन्य महत्वपूर्ण मूर्ति पुरोहित-राजा की है (चित्र 6.11)। यह एक पुरुष की मूर्ति है, जिसकी ऊंचाई लगभग सात इंच है। नाक की नोक पर ध्यान केंद्रित करते हुए, आकृति की आंखें आधी बंद हैं। उसने तिपतिये रेखाचित्र से सजाया हुआ एक दुशाला पहना है जो

उसके सीने और बाएं कंधे को ढकता है। हमने अनेक स्थलों से जानवरों की मूर्तियाँ भी खोजी हैं। ये खिलौनों के रूप में इस्तेमाल की जाती होंगी। इनमें से कुछ ताबीज या आभूषण हो सकते हैं (जॉन मार्शल, 1931)।

चित्र 6.10: मोहनजोदड़ो की 'Dancing Girl'। साभार : अैल्फ्रेड नौराथ। स्रोत : विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:The_Dancing_Girl,_in_a_photogravure_by_Alfred_Nawrath,1938.jpg)।

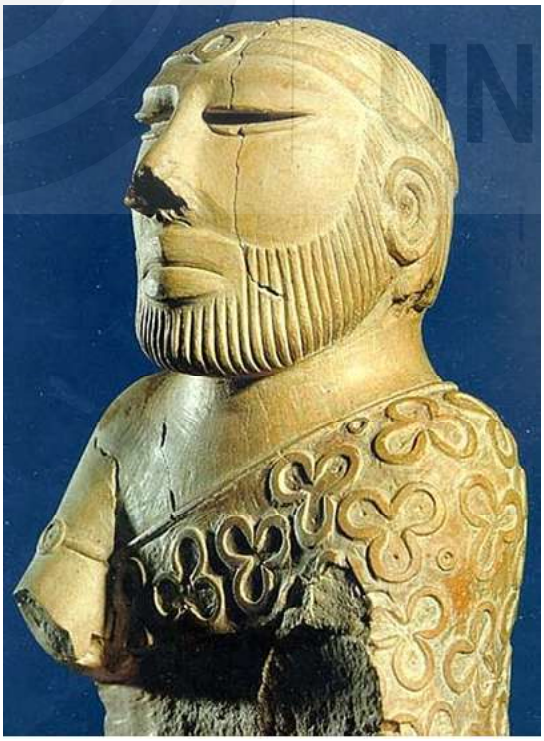

चित्र 6.11: 'पुरोहित-राजा', मोहनजोदड़ो। राष्ट्रीय संग्रहालय, कराची, पाकिस्तान। साभार : मैमून मेंगल। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://en.wikipedia.org/wiki/File:Mohenjo-daro_Priesterk%C3%B6nig.jpeg)।

6.8 व्यापार

आंतरिक व्यापार

हड़प्पा व्यापार वस्तु विनिमय पर आधारित था। विभिन्न प्रकार के सामानों का व्यापार किया जाता था। मकरान और कच्छ तट जैसे सुदूर क्षेत्रों से चूड़ियाँ बनाने के लिए शंख हड़प्पा लाया जाता था। सुक्कुर-रोहड़ी की पहाड़ियों के अनेक स्थलों से बिल्लौर (Chert) से बने ब्लेड प्राप्त हुये हैं। इसके अलावा, मुहरों और वज़न करने की समरूप/एकरूप पद्धति से एक नियमित आंतरिक व्यापार तंत्र के अस्तित्व का संकेत मिलता है। वास्तविक व्यापार मार्गों का अनुमान केवल कच्चे माल के स्रोतों और स्थलों की अविस्थिति समझ कर ही लगाया जा सकता है। नयनजोत लाहिड़ी (1992) के अनुसार, बलूचिस्तान ने दक्षिणी सिंध के रास्ते से हड़प्पा शहरों को तांबा, सीसा, सूर्यकांत मणि, गोमेद और शिलाजीत की आपूर्ति की। हड़प्पा स्थलों और प्राप्त सामग्री के स्थान से हम तीन मार्गों का पता लगा सकते हैं : मूला (Mula) दर्रा, सिंध के कोहिस्तान में स्थित दर्रे और बलूचिस्तान में सुत्कागनडोर और शाही टम्प (Shahi Tump) को बालाकोट सिंध के साथ जोड़ने वाला एक तटीय मार्ग।

सिंध के स्थलों ने पंजाब के स्थलों को सीप/शंख और चकमक पत्थर (Flint) जैसी सामग्री की आपूर्ति की। यह व्यापार शायद सिंधु नदी पर होता था। हड़प्पा स्थलों के फैलाव से हम कराची जिले से मुल्तान होते हुए लरकाना जिले और सुक्कुर-रोहड़ी की पहाड़ियों तक जा रहे एक स्थल मार्ग का अनुमान लगा सकते हैं। पंजाब, दूसरी तरफ, राजस्थान, हरियाणा, बलूचिस्तान और अफ़ग़ानिस्तान में कई स्थलों से जुड़ा हुआ था। दो व्यापार मार्गों ने राजस्थान को पंजाब से जोड़ा। पहला, एक भूमि-नदी मार्ग ने मुल्तान को दक्षिणी राजस्थान से बहावलपुर, अनूपगढ़, महाजन, लूणकरणसर, बीकानेर और जयपुर के रास्ते से सतलुज और घग्गर-हकरा के घाटों पर नौकाओं द्वारा जोड़ा। दूसरा, पूगल (Pugal/Poogal) के रास्ते से मुल्तान को बीकानेर से एक भूमि मार्ग जोड़ता था। राजस्थान ने शेष स्थलों को सोना, चाँदी, सीसा, अर्ध-कीमती रत्न और तांबा प्रदान किया और बदले में बिल्लौर और सीप प्राप्त किए। दो भूमि मार्ग हरियाणा को पंजाब से जोड़ते थे : ऊपरी सतलुज क्षेत्र से गुज़रता एक रास्ता बहावलपुर को जोड़ता था और दूसरा मध्य पंजाब में घग्गर-दृशद्वती विभाजक क्षेत्र से गुज़रता था। इस प्रकार, उन्होंने राजस्थान से तांबा, चांदी, पन्ना और अर्ध-कीमती रत्नों का अधिग्रहण किया और सिंध से सीप और चकमक पत्थर प्राप्त किए। पंजाब भी बलूचिस्तान से सॉल्ट रेंज, चिनिओट, किराना (Kirana) और ढाक (Dhak) जैसे पहाड़ी बाहरी इलाकों के माध्यम से भी जुड़ा था। ये पहाड़ियाँ कच्चे माल जैसे शैलखटी, कुलनार, सूर्यकांत मणि, चूना पत्थर, स्लेट, ग्रेनाइट, बाजालत/असिताष्म (Basalt), संगमरमर, क्वार्टज़ाइट, बलुआ पत्थर, *एबरी*, तांबा, सीसा, सोना और हेमाटाइट से समृद्ध हैं। एक अन्य मार्ग सिंधु नदी का अनुगमन करता था। यह हड़प्पा को गुमला नामक स्थल से जोड़ता था और यहाँ से मध्य एशिया के स्थलों तक जाता था।

बाहरी व्यापार

सिंधु सभ्यता ने समकालीन सभ्यताओं के साथ अन्तःक्रिया और वस्तुओं का विनिमय किया होगा। पश्चिम एशिया के अनेक स्थलों से कई सिंधु कलाकृतियों की खोज की गई है।

मेसोपोटामिया के शहरों के लिए एक महत्वपूर्ण निर्यात वस्तु इंद्रगोप से बने लंबे, बेलनाकार, नलीदार मनके और इंद्रगोप के नक्काशी किए गए मनके थे। उर में इन्हें 2600 बी.सी.ई. के आसपास की शाही कब्रों से प्राप्त किया गया है। उर, किश (Kish), निप्पुर (Nippur),

अस्सुर (Assur) और टेल असमर (Tell Asmar) से भी नक्काशीदार इंद्रगोप मनकों की खोज की गई है। इसके अलावा, सिंधु की और सिंधु जैसी मुहरों की प्राप्ति भी व्यापार के अस्तित्व का समर्थन करती है। किश, लगाश (Lagash), निप्पुर, टेल असमर, टेप गावरा (Tepe Gawra), उर से मुहरें प्राप्त की गई हैं। उर से एक सिंधु बाट प्राप्त किया गया है और टेप गावरा और अल हिबा से हमने एक सिंधु पासा बरामद किया है।

राजा सारगोन (Sargon) के समय (2334-2279 बी.सी.ई.) के मेसोपोटामियन ग्रंथ हमें दिलमुन, मगन (Magan) और मेलूहा के साथ व्यापारिक संबंधों के बारे में बताते हैं। दिलमुन की पहचान बहरीन और मगन की पहचान मकरान तट के साथ की जाती है। मेलूहा की पहचान पर कुछ विवाद हैं। ये ग्रंथ हमें मेलूहा के जहाजों के बारे में बताते हैं जो तांबा, क़लई/राँगा, लाजर्वद, इंद्रगोप, आबनूस, सोना, चांदी, हाथी दांत, शहतूत की लकड़ी, सिसो (Sisso) और खजूर लाते थे। यह स्पष्ट नहीं है कि मेलूहा हड़प्पा को संदर्भित करता है या नहीं। डी. के. चक्रबर्ती का तर्क है कि इनमें जिस प्रकार की वस्तुओं का उल्लेख शामिल है 'मेलूहा' शब्द हड़प्पा सभ्यता के बजाय मेसोपोटामिया के पूर्व के क्षेत्रों को संदर्भित करता है।

मेसोपोटामिया के अलावा, बहरीन, फ़ैलका (Failaka), शारजाह और ओमान प्रायद्वीप जैसे खाड़ी क्षेत्रों में स्थित स्थलों ने हमें सिंधु की या सिंधु-प्रेरित वस्तुएं दी हैं। रस-अल-क़ला (Ras-al-Qala), हमद (Hamad), हज्जर (Hajjar), फ़ैलका में सिंधु सकेताक्षरों वाली मुहरें पाई गई हैं। टेल अबरक़ से संभवतः किसी हड़प्पा स्थल में बनी हाथी दांत की कंघी मिली है। ओमान में, रस-अल-जुनायज़ (Ras-al-Junayaz) ने हड़प्पा वस्तुओं की विविधता के साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं। अभिलेखित ठीकरा, शैलखटी की मुहरें, डामर (Bitumen) की परत से लेपित लकड़ी व हाथी दांत से बनी कंघी। तुर्कमेनिया में, अल्तीन टेपे (Altyn Tepe) और नमाज़गा (Namazga) के स्थलों से सिंधु से संबंधित वस्तुयें प्राप्त हुई हैं। अल्तीन टेपे से Soapstone/सिलखड़ी (Ablaster) से बनी एक चौकोर मुहर प्राप्त हुई है जिस पर सिंधु चित्रलेख अंकित हैं। नमाज़गा से हडप्पा सभ्यता में खोजी गई आकृति के समान ही पकी मिट्टी (Terracotta) की एक महालिंगी (ithyphallic) कलाकृति को प्राप्त किया गया है।

उत्तर और दक्षिण ईरान के स्थलों को इंद्रगोप से बने मनकों का निर्यात किया जाता था। उन्हें उत्तरी ईरान के हिसार, शाह टेपे और मर्लिक (Marlik) और शहदाद, टेपे यहया, जलालाबाद और कल्लेह निसार (Kalleh Nisar) से प्राप्त किया गया है। इसके अलावा, टेपे यहया से भी सिंधु मुहर लगा एक ठीकरा (sherd) और 2320 बी.सी.ई. में दिनांकित कमल मुद्रा में बैठे एक व्यक्ति को दर्शाती पकी मिट्टी (Terracotta) की एक वस्तु प्राप्त हुई है। कल्लेह निसार से तीन सिंधु जैसी मुहरें प्राप्त हुई हैं। सूसा (Susa) से सिंधु चिह्नों को दर्शाती एक बेलनाकार और एक वृत्ताकार मुहर प्राप्त हुई है। शहर-ए-सोख्ता (Shahr-i-Sokhta) में गुजरात तट से प्राप्त ज़ैनकस्पीरम (Xancuspyrum) शंखों की खोज की गई है।

पश्चिम एशिया के अलावा, हड़प्पा के अफ़ग़ानिस्तान और मध्य एशिया के साथ भी व्यापारिक संपर्क थे। अफ़ग़ानिस्तान से प्राप्त लाजवर्द और मध्य एशिया से प्राप्त क़लई बहुत मूल्यवान थे। अफ़ग़ानिस्तान में शोरतुघई नामक स्थल संभवतः इस व्यापार को सुविधाजनक बनाने के लिए स्थापित किया गया था। उत्तरी अफ़ग़ानिस्तान में डैशली (Dashly) 3 जैसे कुछ स्थलों ने हमें हड़प्पा के साथ संपर्क के प्रमाण दिए हैं। इस स्थल पर स्थित महल से हमने सिंधु जैसे तिपतिये रूपांकनों वाले पुरावशेषों, सिलखड़ी पत्तरों पर अंकित कूबड़ वाले बैल और शैलखटी से बने वृक्काकार फूलदानों आदि कलाकृतियों की खोज की है।

6.9 समाज

पुरातात्विक साक्ष्यों से हड़प्पा समाज की रचना बिल्कुल स्पष्ट है। आर्थिक गतिविधियों से हम समाज में विभिन्न शिल्प विशेषज्ञों, व्यापारियों और किसानों की उपस्थिति का अनुमान लगा सकते हैं। किलो, अन्नभंडारों जैसी महत्वपूर्ण इमारतों का निर्माण एक श्रमिक वर्ग के अस्तित्व को इंगित करता है। मुहरों की उपस्थिति, कलाकृतियों का मानकीकरण, एक समान तौल का उपयोग एक शासक वर्ग के अस्तित्व को इंगित करता है जिसने विभिन्न आर्थिक गतिविधियों को विनियमित किया। हालांकि हड़प्पा धर्म की प्रकृति पर बहस जारी है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक पुरोहित वर्ग मौजूद था।

शासक

हड़प्पा राजनीतिक व्यवस्था पर बहस में कई मुद्दे शामिल हैं। क्या इसमें एक ही साम्राज्य था? क्या अलग-अलग राज्य थे जो एक सामान्य विचारधारा का पालन कर रहे थे? किस तरह के शासकों का अस्तित्व थाः निरंकुश या समष्टिगत? क्या सभ्यता एक राज्य या एक मुखियातंत्र के स्तर पर थी?

एक मत व्हीलर (1947) और स्टुअर्ट पिग्गौट का है। पिग्गौट कहते हैं कि यह एक ऐसा साम्राज्य था जो एक कुशल नौकरशाही द्वारा समर्थित निरंकुश पुरोहित-राजाओं द्वारा शासित था। किन्तु डब्ल्यू. फेयरसर्विस (1961, 1967) का मानना है कि केन्द्रीकृत शासन को सैन्य प्रवर्तन और एक स्थायी सेना की आवश्यकता होती है। हड़प्पा शहरों में सैन्य चरित्र का अभाव है। इसके बजाय, शहरों की प्रभावशाली एकरूपता एक धार्मिक विचारधारा के कारण हो सकती है। एस. सी. मलिक इससे सहमत हैं। हालाँकि अन्य विद्वानों का मानना है कि यह एकरूपता एक राजनीतिक प्राधिकरण की तुलना में आंतरिक व्यापार की ज़रूरतों के माध्यम से हासिल की जा सकती थी। ये तर्क हड़प्पा राजनीतिक व्यवस्था को एक बहुत ही साधारण संगठन के रूप में देखने का प्रयास करते हैं। फेयरसर्विस ने शहरों को विनियमित करने वाले गांव जैसे प्राधिकरण की भी वकालत की है।

एम. केनोअर (2006) ने हड़प्पा वासियों में राज्य-स्तर और मुखियातंत्र-स्तर, दोनों प्रकार की राजव्यवस्थाओं की मौजूदगी के लिए तर्क दिया है, जिसमें बड़ी बस्तियाँ राज्य-स्तर पर और सुदूर क्षेत्रों में छोटी बस्तियाँ मुखियातंत्र-स्तर पर संगठित थीं। वह आगे तर्क देते हैं कि हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, राखीगढ़ी और गन्वेरीवाला जैसी शहरी बस्तियाँ स्वतंत्र नगर-राज्य हो सकते थे, जिनमें कई शहरी अभिजात वर्ग सत्ता के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहे थे।

जे. जेकबसन (1986) ने हड़प्पा सभ्यता के विभिन्न पहलुओं का सर्वेक्षण किया और यह निष्कर्ष निकाला कि सभ्यता ''सामाजिक-सांस्कृतिक एकीकरण के राज्य स्तर'' को प्रदर्शित करती है जैसा कि एक विस्तृत क्षेत्र में व्याप्त सांस्कृतिक और शायद भाषाई एकरूपता, शहरी योजना के मानकीकरण तथा अन्य तथ्यों से परिलक्षित होता है। हालाँकि, राजव्यवस्था के संदर्भ में यह सभ्यता एक प्रारंभिक राज्य स्तर पर हो सकती है जैसा कि इसके कमज़ोर सैन्य घटक और स्तरीकरण के अशक्त स्तरों से देखा गया है।

अंत में हम कह सकते हैं कि हड़प्पा सभ्यता में कोई न कोई राजनीतिक सत्ता/राजव्यवस्था अवश्य मौजूद थी जो मेसोपोटामिया या मिस्र के राजतंत्र से भिन्न थी। संचार प्रणालियाँ, कलाकृतियों का मानकीकरण, स्थल विशेषज्ञता, सार्वजनिक कार्यों के लिए श्रम जुटाना, लेखन की सामान्य प्रणाली का उपयोग, सांस्कृतिक समरूपता और शोरतुघई जैसी व्यापारिक सीमा-चौकियों (trading out posts) की स्थापना – ये सभी तत्व जटिलता के एक स्तर का संकेत देते हैं जो किसी प्रकार की राजनीतिक सत्ता के बिना संभव नहीं हो सकती थी।

6.10 धर्म

हड़प्पा धर्म की एक प्रारंभिक समझ जॉन मार्शल द्वारा प्रस्तुत की गई थी। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा से उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर उन्होंने हड़प्पा धर्म और बाद के हिंदू धर्म के बीच कई समानताएं देखीं। मुहरों से एक की पहचान उनके द्वारा 'आद्य-शिव' मुहर के रूप में की गई (चित्र 6.12)।

चित्र 6.12: 'आद्य-शिव' की मुहर। स्रोत विकिमीडिया कॉमन्स। (http://www.columbia.edu/itc/mealac/pritchett/00routesdata/bce_500back/indusvalley/protoshiva/protoshiva.jpg)।

इस मुहर में मंच पर बैठी एक पुरुष की आकृति अंकित है। उसकी एड़ियां जुड़ी हुई हैं और पैर के अंगूठे नीचे की ओर मुड़े हैं। उसकी दोनों भुजाएँ चूड़ियों से ढकी हुई हैं और घुटनों पर टिकी हुई हैं। यह मुद्रा *योग* में *मूलबंधासन* के समान है। ऐतिहासिक शिव को *योग* से जुड़ा माना गया है और उन्हें *महायोगी* के रूप में जाना जाता था। आकृति छह जानवरों से घिरी हुई है : हाथी, गैंडा, भैंस, बाघ और दो मृग (Ibexes/Antelopes)। इस आधार पर उनकी जानवरों के भगवान या 'पशुपति' के रूप में व्याख्या की जा सकती है (मार्शल, 1931)। उनके आसन के नीचे दो जानवरों को आईबैक्स (Ibex) या मृगों के रूप में पहचाना गया है। यह आकृति तीनमुखी है, जो बाद में शिव के कुछ चित्रणों के समान है।

अन्य साक्ष्य जो शिव के अस्तित्व का समर्थन करने के लिए सामने लाए जा सकते हैं वे मोहनजोदड़ो और हड़प्पा से प्राप्त बेलनाकार पत्थर हैं जिन्हें *शिव-लिंग* के रूप में देखा जा सकता है। हालाँकि *आद्य-शिव* के सिद्धांत पर मतभेद हैं।

इस पुरुष देवता की उपस्थिति के अलावा मार्शल ने सिंधु सभ्यता में मातृ-देवी की पूजा की उपस्थिति को रेखांकित किया। दो प्रकार के आंकड़े उपलब्ध हैं: मुहरें और लघु-मूर्तियाँ। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा में खोजी गई कई स्त्री लघु-मूर्तियों में मार्शल ने पंखे के आकार की केश-सज्जा से सुशोभित, मनकों का हार और छोटी स्कर्ट (skirt) पहने एक स्त्री की कलाकृति को मातृ-देवी बताया है। यह लघुमूर्ति अन्य प्राचीन संस्कृतियों में पाए जाने वाली लघुमूर्तियों के समान है। यह मातृ-देवी या प्रकृति-देवी का प्रतिनिधित्व करती है। स्त्री की ऐसी मूर्तियों को ज़्यादातर पाकिस्तान की तरफ़ के स्थलों में पाया गया है। भारत की तरफ, हम हरियाणा में बनावली के बारे में सोच सकते हैं जहाँ बड़ी संख्या में इन मूर्तियों को प्राप्त किया गया है (अलेक्ज़ेंड्रा अर्देलियनु-जेनसन की पुस्तक में बिष्ट और अस्थाना द्वारा इस बात का हवाला दिया गया है)। इससे पता चलता है कि मातृ-देवी पंथ कुछ क्षेत्रों में लोकप्रिय था। कालीबंगन, लोथल और बनावली जैसे स्थलों में अग्नि वेदियों के प्रमाण हैं। यह कम से कम कुछ हड़प्पा शहरों में बलि अनुष्ठान के अस्तित्व की ओर संकेत देता है।

हड़प्पावासी पीपल के वृक्षों की भी पूजा करते होंगे। एक मुहर में इस पेड़ को नमन करती सात आकृतियों को दर्शाया गया है। सींग वाला एक पशु इस पेड़ पर खड़ा है। कुछ विद्वानों का तर्क है कि यह दृश्य बाद की *सप्तमातृकाओं* का स्मरण कराता है। कुछ लोग *सप्त-ऋषियों* के रूप में भी इन आकृतियों की पहचान करते हैं। लेकिन कुछ भी निश्चित नहीं कहा जा सकता है।

वास्तुकला के क्षेत्र में, बहुत कम इमारतों की पहचान मंदिरों के रूप में की गई है। हड़प्पा वासियों की अंत्येष्टि प्रथा बहुत भिन्नता दर्शाती है। शवदहन-क्रिया और दफनाने की क्रिया, दोनों ज्ञात थे। जबकि मोहनजोदड़ो जैसे कुछ स्थलों में बस्ती के भीतर कब्रें थीं, हड़प्पा, कालीबंगन, धोलावीरा और हाल ही में राखीगढ़ी में बस्ती से अलग कब्रिस्तान पाए गए हैं। हाल की खुदाई में धोलावीरा और राखीगढ़ी से अनोखी कब्रों की खोज की गई है। धोलावीरा में महापाषाण (Megaliths) के कुछ सबूत हैं, लेकिन ये ज़्यादातर प्रतीकात्मक कब्रें हैं (बिष्ट, 2011)। राखीगढ़ी में एक अनूठी विशेषता यह है कि कब्रिस्तान में महिला कब्रों में अक्सर पुरुष कब्रों की तुलना में अधिक दफनाने वाले सामान (burial goods) होते थे।

बोध प्रश्न 2

1) हड़प्पा बस्तियों की वास्तुकला की विशेषताओं और जल निकासी पर चर्चा करें।

2) हड़प्पा धर्म के प्रमुख तत्व क्या हैं?

3) हड़प्पा वासियों की अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करें।

4) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है?

   i) शिव सबसे महत्वपूर्ण हड़प्पा भगवान प्रतीत होते हैं। ( )

   ii) हड़प्पा की धार्मिक वस्तुओं में महिला देवीयाँ अनुपस्थित थीं। ( )

   iii) लगता है कि वृक्षों की भी पूजा हड़प्पावासी करते थे। ( )

   iv) हड़प्पा वासियों द्वारा किसी भी पशु की पूजा नहीं की जाती थी। ( )

6.11 सारांश

यह संक्षेप में परिपक्व हड़प्पा चरण के समाज, अर्थव्यवस्था और राजनीतिक व्यवस्था का अवलोकन है। सभ्यता का विस्तार क्षेत्र बहुत विस्तृत है। हड़प्पावासी लगभग 500 वर्षों तक उल्लेखनीय एकरूपता बनाए रखने में सक्षम रहे। हालांकि उन्होंने विभिन्न जीवन-निर्वाह प्रारूपों, भोजन की आदतों, शिल्प परंपराओं, धार्मिक मान्यताओं, सांस्कृतिक प्रथाओं और सामाजिक रीति-रिवाजों का पालन किया।

परिपक्व हड़प्पा चरण को शहरीकरण से विशेषित किया गया है। शिल्प, अर्थव्यवस्था, व्यापार, धातु कर्म, कला के क्षेत्र में हम पूर्ववर्ती स्तरों से गहनता को देखते हैं। बस्तियों को उनकी सार्वजनिक वास्तुकला, जल-निकासी पद्धति, नगर-दुर्ग और निचले शहर के रूप में बस्ती के विभाजन, किलाबंदी की दीवारों, अन्न-कोठारों, कुओं, सड़कों, मल-निष्कासन प्रणाली, मृदभांडों और शिल्प वस्तुओं के लिए जाना जाता है। 1800 बी.सी.ई. से हम पुरातात्विक आंकड़ों में बदलाव को देखते हैं। शहरी चरण पूरी तरह से समाप्त हो गया था। कालीबंगन और बनावली जैसे कुछ स्थलों को पूरी तरह त्याग दिया गया था। छोटी और कम समृद्ध संस्कृतियों को परवर्ती हड़प्पा के रूप में नामित किया गया है। अगली इकाई में इस चरण के अधिक विवरण एवं विश्लेषण के साथ-साथ हम हड़प्पा सभ्यता के पतन के कारणों का अध्ययन करेंगे।

6.12 शब्दावली

दुर्गप्राचीर (Bailey) : दुर्ग/गढ़ से संलगन किलाबन्द आंगन।

मुखियातंत्र/प्रारंभिक राज्य : यह जनजाति के बाद के अगले स्तर का प्रतिनिधित्व करता है। स्थायी आवास, अधिक जनसंख्या और विशेषज्ञता इस चरण की विशेषताएं हैं। इसमें एक मुखिया नेतृत्व करता है जो अपने आदिवासी समकक्ष की तुलना में बहुत अधिक शक्तिशाली होता है। इस राजनीतिक व्यवस्था में एकमात्र तत्व जो नामौजूद है वह है सामाजिक स्तरीकरण।

किलाबंद/किलाबंदी : एक दीवार से घिरा हुआ।

भ्रष्ट मोम प्रक्रम (Lost Wax Process) : यह धातु को आकार देने की प्रक्रिया है जिसमें पिघली हुई धातु को मोम से बने वांछित सांचे में डाला जाता है। धातु के ठोस होने के बाद मोम पिघला दिया जाता है।

महापाषाण (Megalith) : इस संज्ञा में दो शब्द शामिल हैं : 'Mega' अर्थात बड़ा और 'Lith' अर्थात पत्थर। विश्व भर में कई संस्कृतियों में मृतकों को अक्सर पत्थर की विशाल पटिया (slab) से बने स्मारकों में दफनाया जाता था।

खंदक : किसी इमारत की रक्षा के लिए उसके चारों ओर बनाया गया एक कृत्रिम जल निकाय।

शमन (Shaman) : एक व्यक्ति जो अवचेतन/मुर्छा (trance) के माध्यम से शक्तियों को प्राप्त करता है। वे दूसरी दुनिया के साथ संपर्क स्थापित कर सकते हैं और स्वास्थ्यप्राद/रोग हरनेवाली शक्तियों के अधिकारी होते हैं।

ग़रकी (Sinking) : इसे Doming के नाम से भी जाना जाता है। यह धातु कर्म में उपयोग की जाने वाली एक तकनीक है जिसके द्वारा किसी धातु को वांछित आकार दिया जाता है।

राज्य : राज्य एक अधिक जटिल इकाई है। घनी आबादी और उच्च स्तर का अधिशेष इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं। अधिशेष तक पहुंच समाज में स्थिति, पद अथवा श्रेणी पर निर्भर करती है। इसमें श्रम का अधिक विभाजन और सामाजिक स्तरीकरण होता है। शासक की शक्ति निरंकुश/परम होती है।

आदिवासी समाज : यह एक बहुत ही सरल समाज है जिसमें परिवार समूहों का एक संग्रह होता है। इसमें कृषि और शिकार पर निर्भर एक सरल अर्थव्यवस्था होती है और छोटे पैमाने पर शिल्प उत्पादन होता है।

6.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) – घ) ii) – क) iii) – ख) iv) – ग)

2) भाग 6.4 देखें।

3) उपभाग 6.4.6 देखें।

बोध प्रश्न 2

1) कृपया भाग 6.4 और इसके उपभाग तथा भाग 6.6 देखें।

2) भाग 6.10 देखें।

3) भाग 6.5 देखें।

4) i और iii

6.14 संदर्भ ग्रंथ

ऑल्चिन, बी. और ऑल्चिन, एफ़. आर. (1997). *औरिजिन्स ऑफ़ ए सिविलाइज़ेशन : द प्रीहिस्ट्री एंड अर्ली आर्कियोलॉजी ऑफ साउथ एशिया.* वाइकिंग एडल्ट।

चक्रबर्ती, डी. के. (1999). *इंडिया : ऐन आर्कियोलॉजिकल हिस्ट्री.* ऑक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

चक्रबर्ती, डी. के. (2006). *द ऑक्सफ़र्ड कम्पैनियन टू इंडियन आर्कियोलॉजी.* ऑक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

मार्शल, जॉन (1931). *मोहनजादड़ो एंड द इंडस सिविलाइज़ेशन.* खंड 1. लंदन : आर्थर प्रोबस्थाइन।

पोश्हैल, जी. (2003). *द इंडस सिविलाइज़ेशन : ए कंटम्पोररी परस्पैक्टिव.* न्यू यॉर्क : अल्ता मिरा प्रेस।

रत्नागर, एस. (2016). *हड़प्पन आर्कियोलॉजी : अर्ली स्टेट परस्पैक्टिव्स.* दिल्ली : प्राइमस बुक्स।

इकाई 7 हड़प्पा सभ्यता-III*

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 हड़प्पा सभ्यता का ह्रास : पुरातात्विक साक्ष्य

7.3 आकस्मिक ह्रास के सिद्धांत

- 7.3.1 बाढ़ और भूकम्प
- 7.3.2 सिंधु नदी का मार्ग बदलना
- 7.3.3 शुष्कता में वृद्धि और घग्घर का सूख जाना
- 7.3.4 बर्बर आक्रमण

7.4 पारिस्थितिक असुंतलन

7.5 परंपरा बाद में भी जीवित रही

7.6 हड़प्पा परंपरा का प्रसार

7.7 हड़प्पा सभ्यता से क्या बचा?

7.8 सारांश

7.9 शब्दावली

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.11 संदर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप इस बारे में जानेंगे:

- हड़प्पा सभ्यता के ह्रास को समझ पाने में विद्वानों के समक्ष आई समस्याएँ;
- हड़प्पा सभ्यता के ह्रास के विषय में विद्वानों द्वारा दिये गये मत;
- विद्वानों ने अनेक वर्षों से हड़प्पा सभ्यता के ह्रास के कारण खोजना क्यों बंद कर दिया है? तथा
- अब विद्धान हड़प्पा सभ्यता के काफ़ी समय तक बने रहने के साक्ष्य खोज रहे हैं।

7.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में हमने हड़प्पा सभ्यता की उत्पत्ति और विकास के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की है। हालाँकि, बाद के चरण में इसकी परिपक्वता के विभिन्न पहलुओं यानी लेखन, नगर नियोजन, एकरूपता इत्यादि का लुप्त होना पेचीदा विषय है। इस इकाई में हम इस रहस्य को सुलझाने के लिए लगाये गए विभिन्न तर्कों की जाँच करेंगे।

7.2 हड़प्पा सभ्यता का ह्रास : पुरातात्विक साक्ष्य

हड़प्पा, मोहनजोदड़ो और कालीबंगन जैसे नगरों के नगर नियोजन और निर्माण में क्रमिक ह्रास हुआ। पुरानी जीर्ण ईंटों से बने और घटिया निर्माण वाले घरों ने नगरों की सड़कों और

* यह इकाई ई.एच.आई.-02, खंड-2 से ली गयी है।

गलियों पर भी कब्जा कर लिया। पतली विभाजक दीवारों से घरों के आंगनों का उपविभाजन कर दिया गया। शहर बड़ी तेजी से तंग बस्तियों में बदल रहे थे। मोहनजोदड़ो के वास्तुकला के विस्तृत अध्ययन से पता चलता है कि 'विशाल स्नानागार' के अनेक प्रवेश मार्ग अवरुद्ध हो गए थे। कुछ समय बाद 'विशाल स्नानागार' और 'अन्न भण्डार' का उपयोग पूर्णतः समाप्त हो गया। इसी समय मोहनजोदड़ो में अपेक्षाकृत बाद के स्तरों (बाद की बसावट) में मूर्तियों और लघुमूर्तियों, मनकों, चूड़ियों और पछचीकारी की संख्या में स्पष्ट कमी दिखाई देती है। अन्त में मोहनजोदडो नगर मूलतः 85 हेक्टेयर से सुकड़ कर मात्र तीन हेक्टेयर की छोटी सी बस्ती रह गया। हड़प्पा के परित्याग से पहले लगता है एक और जन समूह आया था जिसकी जानकारी हमें उनकी मुर्दों को दफनाने की पद्धतियों से चलता है। वे मिट्टी के जिन बर्तनों का इस्तेमाल करते थे वे बर्तन हड़प्पा निवासियों के बर्तनों से भिन्न थे। उनकी संस्कृति को ''सिमेटरी-एच'' (कब्रिस्तान-एच) संस्कृति कहा जाता है। कालीबंगन और चंहुदाड़ो जैसे स्थानों में भी ह्रास की प्रक्रिया स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही थी। हम देखते हैं कि शक्ति और विचारधारा से सम्बद्ध और भव्यता प्रदर्शन के सामान अधिक से अधिक दुर्लभ हो रहे थे। बाद में हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे नगरों का पूर्ण परित्याग हो गया।

बहावलपुर क्षेत्र में हड़प्पा कालीन और परवर्ती हड़प्पा कालीन स्थानों के शहरी नमूने के अध्ययन से भी ह्रास की प्रवृत्ति लक्षित होती है। हाकड़ा नदी के तटों के साथ परिपक्व काल में जहाँ 174 बस्तियाँ थी, वहाँ उत्तरवर्ती हड़प्पा काल में बस्तियों की यह संख्या घटकर 50 रह गई। इस बात की संभावना है कि अपने जीवन के बाद के दो-तीन सौ वर्षों में हड़प्पा-सभ्यता के मूल प्रदेश में बस्तियों का ह्रास हो रहा था। जन-समूह या तो नष्ट हो गए थे या अन्य क्षेत्रों में चले गए थे। जहाँ हड़प्पा, बहावलपुर और मोहनजोदड़ो के त्रिभुज में बस्तियों की संख्याओं में ह्रास हुआ वहीं गुजरात, पूर्वी पंजाब, हरियाणा और ऊपरी दोआब

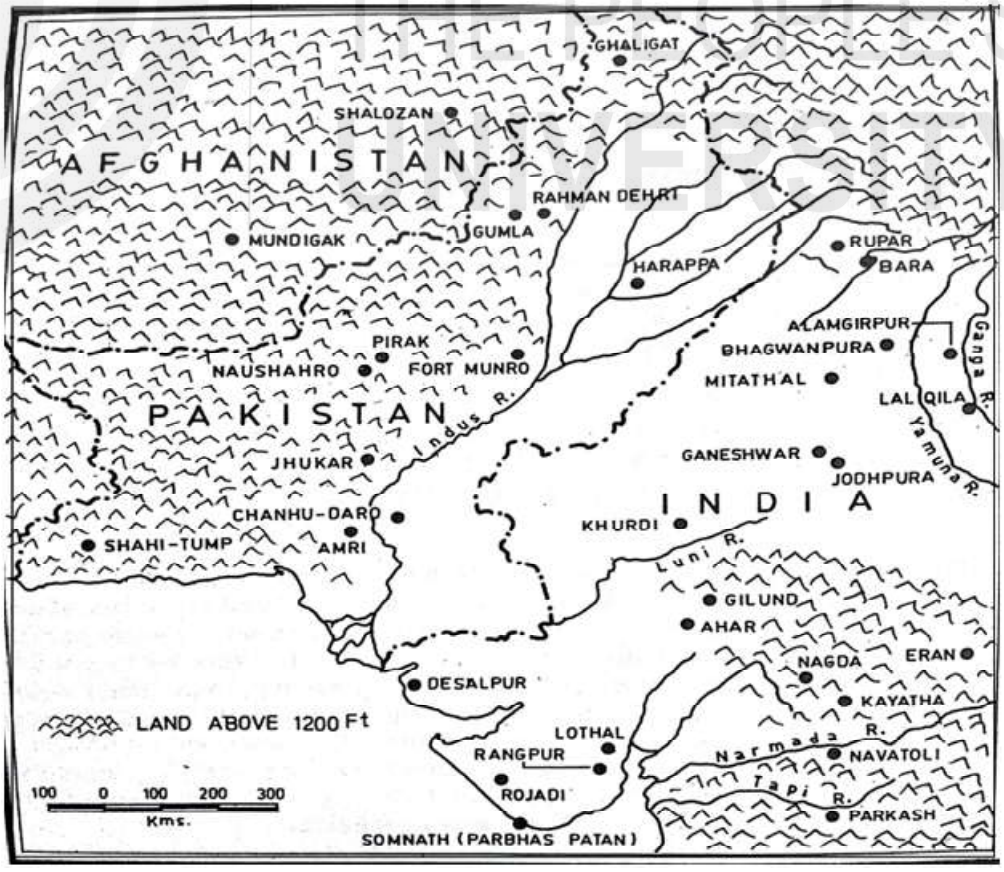

मानचित्र : उत्तर हड़प्पा काल के स्थल। स्रोत : ई.एच.आई.-02, खंड-2.

के दूरस्थ क्षेत्रों में बस्तियों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई। इससे इन क्षेत्रों में लोगों की संख्या में अपूर्व वृद्धि का संकेत मिलता है। इन क्षेत्रों की जनसंख्या में आकस्मिक वृद्धि का कारण हड़प्पा के मूल क्षेत्रों से लोगों का आना हो सकता है।

हड़प्पा-सभ्यता के दूरस्थ क्षेत्रों में जैसे गुजरात, राजस्थान और पंजाब के प्रदेश में लोग रहते रहे। लेकिन उनके जीवन में परिवर्तन आ गया था। हड़प्पा-सभ्यता से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण लक्षण जैसे लेखन, तोलने के समान बाट, हड़प्पा कालीन मिट्टी के बर्तन और वास्तुकला शैली लुप्त हो गए थे।

सिंधु नदी के नगरों का परित्याग स्थूल रूप से लगभग 1800 बी.सी.ई. में हुआ। इस तारीख का समर्थन इस तथ्य से होता है कि मेसोपोटामिया साहित्य में 1900 बी.सी.ई के अंत तक मेलुहा का उल्लेख समाप्त हो गया था। तथापि आज भी हड़प्पा कालीन नगरों के अंत का कालानुक्रम अनिश्चित है। हम आज तक यह नहीं जान सके हैं कि मुख्य बस्तियों का परित्याग एक ही समय हुआ अथवा भिन्न-भिन्न अवधियों में हुआ। तथापि यह अवश्य निश्चित है कि मुख्य नगरों के परित्याग और अन्य बस्तियों को विनगरीकरण से हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास का संकेत मिलता है।

7.3 आकस्मिक ह्रास के सिद्धांत

विद्वानों ने इस प्रश्न के विभिन्न उत्तर दिए हैं कि यह सभ्यता नष्ट क्यों हुई? कुछ विद्वानों ने जिनका विश्वास है कि सभ्यता का नाटकीय अंत हो गया, उन्होंने आकस्मिक विपत्ति के ऐसे साक्ष्य खोजे हैं जिससे शहरी समुदायों का नाश हो गया। हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास के लिए कुछ अपेक्षाकृत अधिक संभावना युक्त सिद्धांत निम्न हैं:

क) यह भयंकर बाढ़ से नष्ट हो गई।

ख) ह्रास नदियों का रास्ता बदलने से और घग्घर-हाकड़ा नदी तंत्र के धीरे-धीरे सूख जाने के कारण हुआ।

ग) बर्बर आक्रमणकारियों ने शहरों को बर्बाद कर दिया।

घ) केंद्रों की बदली हुई माँगों से क्षेत्र की पारिस्थितिकी भंग हो गई और उसे संभाला नहीं जा सका।

आइए, इन स्पष्टीकरणों पर उनके गुण-दोषों के आधार पर चर्चा करें।

7.3.1 बाढ़ और भूकम्प

हड़प्पा सभ्यता के ह्रास के लिए विद्वानों ने जो कारण बताए हैं, उनमें उन्होंने मोहनजोदड़ो में बाढ़ आने के साक्ष्य भी शामिल किए हैं। प्रमुख खुदाई करने वालों के नोटबुक से पता चलता है कि मोहनजोदड़ो में रिहाइश की विभिन्न अवधियों से अत्यधिक बाढ़ के साक्ष्य मिले हैं। यह निष्कर्ष इस तथ्य से निकाला जा सकता है कि मोहनजोदड़ो में मकानों और सड़कों पर इसके लम्बे इतिहास में अनेक बार कीचड़युक्त मिट्टी भरी पड़ी थी और टूटे हुए भवनों की सामग्री और मलबा भरा पड़ा था। लगता है कीचड़युक्त यह मिट्टी उस बाढ़ के पानी के साथ आई जिसके पानी में सड़कें और मकान डूब गए थे। बाढ़ का पानी उतर जाने के बाद मोहनजोदड़ो के निवासियों ने पहले के मकानों के मलबे के ऊपर फिर से मकान और सड़कें बना लीं। इस प्रकार की भयंकर बाढ़ और मलबे के ऊपर पुनःनिर्माण का सिलसिला कम से कम तीन बार चला। रिहाइशी क्षेत्र में खुदाई से पता चला है कि 70 फुट ऊँचाई

तक रिहायशी तलों का सिलसिला था। यह सात मंजिला इमारत की ऊँचाई के बराबर है। विभिन्न आवासी स्तरों के बीच कीचड़ की स्तरें पाई गई थीं। आज के भूतल से 80 फुट ऊँचाई तक कई स्थानों पर कीचड़ के ढेर मिले हैं। इस प्रकार, कई विद्वानों का विश्वास है कि ये मोहनजोदड़ो में विनाशकारी बाढ़ आने के साक्ष्य हैं। इन बाढ़ों के कारण अपने पूरे इतिहास काल में शहर बार-बार अस्थायी रूप से वीरान हुआ और फिर बसा। यह बाढ़ महा भयंकर थी। यह इस बात से प्रमाणित होता है कि नदी की कीचड़ के ढेर आज के भूतल से 80 फुट ऊँचाई तक मिले हैं जिसका अर्थ है कि बाढ़ का पानी इस क्षेत्र में इस ऊँचाई तक पहुँचा। मोहनजोदड़ो के हड़प्पा निवासी इन बार-बार आने वाली बाढ़ों से मुकाबला करने में हिम्मत हार गए। एक अवस्था ऐसी आई जब कंगाल हड़प्पा निवासी इसे और सहन न कर सके और इन बस्तियों को छोड़कर चले गए।

रेईक्स (Raikes) की प्राक्कल्पना

महा भयंकर बाढ़ के सिद्धांत का विख्यात जलविज्ञानी आर.एल. रेईक्स ने भी समर्थन किया है। उसका मत है कि ऐसी बाढ़ जो बस्ती के भूतल से 30 फुट ऊँचे भवनों को छू सकती थी, सिंधु नदी में सामान्य बाढ़ आने का परिणाम नहीं हो सकती। उसका विश्वास है कि हड़प्पा सभ्यता का ह्रास भयंकर बाढ़ के कारण हुआ जिससे सिंधु नदी के तट पर स्थित नगर बहुत समय तक डूबे रहे। उसने बताया है कि भू-आकृति विज्ञान की दृष्टि से यह क्षेत्र अशान्त भूकम्प क्षेत्र है। भूकम्पों से हो सकता है, निम्न सिंधु नदी के बाढ़ मैदानों का स्तर ऊँचा हो गया हो। सिंधु नदी के लगभग समकोण पर एक धुरी के साथ-साथ मैदान के इस उत्थान से नदी का समुद्र की ओर मार्ग अवरुद्ध हो गया। इससे सिंधु नदी में पानी इकट्ठा होने लगा। जहाँ कभी सिंधु नदी के शहर आबाद थे, वहाँ एक झील सी बन गई। और इस प्रकार, नदी के बढ़ते हुए पानी के स्तर में मोहनजोदड़ो जैसे शहर डूब गए।

यह बताया जा चुका है कि करांची के पास बालाकोट और मकरान तट पर सुतकागनदौड़ और सुतका-कोह जैसे स्थान हड़प्पा निवासियों के बंदरगाह थे। तथापि आजकल ये समुद्र तट से दूर स्थित है। ऐसा संभवतः उग्र भूकम्प के कारण समुद्र तट पर भूमि के उत्थान के परिणामस्वरूप हुआ। कुछ विद्वानों का मत है कि ऐसे उत्थान दूसरी सहस्त्राब्दी बी.सी.ई. में किसी समय हुए। इन उग्र भूकम्पों से जिन्होंने नदियों को अवरुद्ध कर दिया और शहरों को जला दिया, हड़प्पा-सभ्यता नष्ट हो गई। इससे नदी पर आधारित वाणिज्यिक गतिविधियों और तटीय संचार भंग हो गया।

आलोचना

हड़प्पा सभ्यता के महा भयंकर विनाश का महान सिद्धांत कई विद्वानों को मान्य नहीं है। एच. टी. लैमब्रिक का कहना है कि यह विचार कि एक नदी भूकम्पीय उत्थानों से इस प्रकार अवरुद्ध हो जाएगी, निम्नलिखित दो कारणों से सही नहीं है :

1) यदि किसी भूकम्प से अनुप्रवाह पर एक कृत्रिम बाँध बन भी गया, तो भी सिंधु नदी के अत्यधिक मात्रा में जल से वह आसानी से टूट गया होगा। सिंधु में हाल ही में 1819 के भूकम्प से जो टीला बन गया था, वह सिंधु की एक छोटी नदी नारा से उत्पन्न पहली बाढ़ में ही बह गया था।

2) जमा हो गई गाद (कीचड़) परिकल्पित झील में पानी के उठते हुए तल के समान्तर हो गई होती। यह नदी के पिछले मार्ग के तल के साथ जमा होगी। इस प्रकार मोहनजोदड़ो की गाद बाढ़ के कारण इकट्ठी नहीं हुई थी। इस सिद्धांत की दूसरी आलोचना यह है कि इस सिद्धांत में सिंधु नदी तंत्र के बाहर की बस्तियों के ह्रास का स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है।

7.3.2 सिंधु नदी का मार्ग बदलना

लैमब्रिक ने इस ह्रास के लिए अपना स्वयं का स्पष्टीकरण दिया है। उसका मत है कि सिंधु नदी के मार्ग में परिवर्तन मोहनजोदड़ो नगर के विनाश का कारण हो सकता है। सिंधु नदी एक अस्थिर नदी तंत्र है जो अपना तल बदलती रहती है, स्पष्टतः सिंधु नदी मोहनजोदड़ो से लगभग 30 मील दूर चली गई। शहर और आसपास के खाद्यान्न उत्पादक गाँवों के लोग इस क्षेत्र से चले गए क्योंकि वे पानी के लिए तरस गए थे। मोहनजोदड़ो के इतिहास में ऐसा अनेक बार हुआ। शहर में देखी गई गाद वास्तव में हवा के कारण इकट्ठी हुई है क्योंकि हवा से बड़ी मात्रा में रेत और गाद उड़कर यहाँ आई। गाद और विधारित कीचड़, कच्ची ईंटों, पक्की ईंटों की संरचनाओं के विखंडित होने से बनी थी जिसे गल्ती से बाढ़ से उत्पन्न गाद मान लिया गया।

आलोचना

इस सिद्धांत से भी हड़प्पा-सभ्यता के पूर्णतः ह्रास के कारण स्पष्ट नहीं होते। अधिक से अधिक यह सिद्धांत मोहनजोदड़ो का वीरान हो जाना स्पष्ट कर सकता है और यदि मोहनजोदड़ो के निवासी नदी के मार्ग में इस प्रकार के बदलाव से परिचित थे तो वे स्वयं ही किसी नई बस्ती में जाकर क्यों नहीं बस गये और मोहनजोदड़ो जैसा दूसरा शहर क्यों नहीं बसा पाए? स्पष्टतः ऐसा लगता है कि इसके कुछ और ही कारण थे।

7.3.3 शुष्कता में वृद्धि और घग्घर का सूख जाना

डी.पी. अग्रवाल और सूद ने हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास के लिए एक नया सिद्धान्त बताया है। उनका मत है कि हड़प्पा-सभ्यता का ह्रास उस क्षेत्र में बढ़ती हुई शुष्कता के कारण और घग्घर-हाकडा नदी तंत्र के सूख जाने के कारण हुआ। संयुक्त राज्य अमरीका, आस्ट्रेलिया और राजस्थान में किए गए अध्ययनों के आधार पर निष्कर्ष निकालते हुए उन्होंने बताया है कि द्वितीय सहस्त्राब्दी बी.सी.ई. के मध्य तक शुष्कता की स्थिति में बहुत वृद्धि हो गई थी। हड़प्पा जैसे अर्ध शुष्क क्षेत्रों में भी नमी और जल उपलब्धता में थोड़ी सी कमी के भी भयंकर परिणाम हो सकते थे। इससे कृषि उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता और इसके परिणामस्वरूप नगर की अर्थव्यवसथा पर बहुत दबाव पड़ता।

उन्होंने पश्चिम राजस्थान में अस्थिर नदी तंत्रों की समस्या पर चर्चा की है। जैसा पहले बताया जा चुका है घग्घर-हाकड़ा क्षेत्र हड़प्पा सभ्यता का एक मूल क्षेत्र था। घग्घर एक शक्तिशाली नदी थी जो समुद्र में गिरने से पहले पंजाब, राजस्थान और कच्छ के रन में से होकर बहती थी।

सतलुज और यमुना नदियाँ इस नदी की सहायक नदियाँ हुआ करती थीं। कुछ विवर्तनिक विक्षोभों के कारण सतलुज सिंधु नदी में समा गई तथा यमुना नदी गंगा नदी में मिलने के लिए पूर्व की ओर रास्ता बदल गई। नदी क्षेत्र में इस प्रकार के परिवर्तन से जिससे घग्घर जल विहीन हो गई, इस क्षेत्र में अवस्थित नगरों के लिए भयंकर उलझनें हुई होंगी। स्पष्टतः शुष्कता में वृद्धि तथा जल निकासी स्वरूप में हुए परिवर्तन से आए पारिस्थितिक विक्षोभों से हड़प्पा-सभ्यता का ह्रास हुआ।

आलोचना

यह सिद्धांत रोचक तो है, पर इसमें कुछ समस्याएँ भी हैं। शुष्कता की परिस्थितियों के संबंध में सिद्धांतों का पूर्णतः अध्ययन नहीं किया गया है और इस संबंध में और सूचनाएँ अपेक्षित हैं। इसी प्रकार घग्घर नदी सूख जाने का काल अभी तक उचित रूप से निर्धारित नहीं किया जा सका है।

7.3.4 बर्बर आक्रमण

व्हीलर का मत है कि हड़प्पा-सभ्यता आक्रमणकारी आर्यों ने नष्ट की थी। जैसा पहले बताया जा चुका है, मोहनजोदड़ो में आवास के अन्तिम चरणों में जनसंहार के साक्ष्य मिलते हैं। सड़कों पर मानव कंकाल पड़े मिले हैं। *ऋग्वेद* में इन स्थानों पर *दासों* और *दस्युओं* के किलों का उल्लेख मिलता है। वैदिक देवता इन्द्र को पुरन्दर कहा जाता है, जिसका अर्थ है ''किलों को नष्ट करने वाला''। *ऋग्वेद* कालीन आर्यों के आवास के भौगोलिक क्षेत्र में पंजाब तथा घग्घर-हाकड़ा क्षेत्र शामिल थे। चूंकि इस ऐतिहासिक चरण में किसी अन्य संस्कृति समूहों के किले होने के कोई अवशेष नहीं मिलते, व्हीलर का मत है कि *ऋग्वेद* में जिसका उल्लेख है वे हड़प्पा के नगर ही हैं। वस्तुतः *ऋग्वेद* में एक स्थान का उल्लेख है जिसे हरियूपिया कहा गया है। यह स्थान रावी नदी के तट पर अवस्थित था। आर्यों ने यहाँ एक युद्ध लड़ा था। इस स्थान का नाम हड़प्पा नाम के समान लगता है। इन साक्ष्यों से व्हीलर ने निष्कर्ष निकाला कि हड़प्पा के शहरों को नष्ट करने वाले आर्य आक्रमणकारी ही थे।

आलोचना

यह सिद्धांत आकर्षक तो है, पर अनेक विद्वानों को मान्य नहीं है। उनका कहना है कि हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास का अनुमानित समय 1800 बी.सी.ई. माना जाता है। पर इसके विपरीत आर्य यहाँ लगभग 1500 बी.सी.ई. से पहले आए नहीं माने जाते। जानकारी की आज की स्थिति के अनुसार दोनों में से किसी भी समय को बदलना कठिन है और इसलिए संभावना यही है कि हड़प्पा निवासियों और आर्यों का कभी एक दूसरे से सामना नहीं हुआ। साथ ही, न तो मोहनजोदड़ो में और न ही हड़प्पा में किसी सैन्य आक्रमण के साक्ष्य मिले हैं। सड़कों पर मनुष्यों के शव पड़े मिलने का साक्ष्य महत्वपूर्ण है। बहरहाल बड़े शहरों का तो पहले से ही अपकर्श हो रहा था। इसके लिए आक्रमण प्राक्कल्पना उचित स्पष्टीकरण नहीं हो सकता।

बोध प्रश्न 1

सही उत्तर पर निशान लगाइये।

1) हड़प्पा-सभ्यता का ह्रास बाढ़ और भूकम्प सिद्धांत द्वारा स्पष्ट नहीं किया जा सकता, क्योंकि :

   i) यह सिंधु घाटी के बाहर की बस्तियों के ह्रास को स्पष्ट करता है। ( )

   ii) सिंधु घाटी के बाहर की बस्तियों के ह्रास को स्पष्ट नहीं कर सकता। ( )

   iii) हड़प्पा निवासी बाढ़ों और भूकम्पों का सामना करना जानते थे। ( )

   iv) उपर्युक्त में से कोई नहीं। ( )

2) हड़प्पा क्षेत्र में शुष्कता में वृद्धि हड़प्पा का ह्रास स्पष्ट नहीं कर सकती, क्योंकि:

   i) इस सिद्धांत पर पूरी तरह विचार किया गया है।

   ii) इस सिद्धांत पर पूरी तरह विचार नहीं किया जा सका है।

   iii) घग्घर नदी के सूखने का काल निर्धारण अभी तक नहीं हो सका है।

   iv) दोनों (ii) और (iii)।

3) बर्बर आक्रमण ने हड़प्पा को तबाह किया, इस सिद्धांत के पक्ष और विपक्ष में साक्ष्यों पर लगभग 50 शब्दों में चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

7.4 पारिस्थितिक असंतुलन

फेयरसर्विस जैसे विद्वानों ने हड़प्पा-सभ्यता का ह्रास पारिस्थितिकी की समस्याओं के रूप में स्पष्ट करने का प्रयास किया है। उसने हड़प्पा नगरों की आबादी की गणना की है और नगर निवासियों का खाद्य ज़रूरतों का हिसाब लगाया है। उसने गणना की है कि इन क्षेत्रों में ग्राम निवासी अपनी उपज का लगभग 80 प्रतिशत खपत स्वयं करते हैं और लगभग 20 प्रतिशत बाजार में बिकने के लिए छोड़ते थे। यदि कृषि का यही प्रतिमान पहले भी विद्यमान रहा होता तो मोहनजोदड़ो जैसे नगर को, जिसकी आबादी लगभग 35 हज़ार थी, खाद्यान्न उगाने के लिए बहुत बड़ी संख्या में ग्रामों की आवश्यकता थीं। फेयरसर्विस की गणना के अनुसार इन अर्ध शुष्क क्षेत्रों में नाजुक पारिस्थितिक संतुलन इसलिए बिगड़ रहा था क्योंकि इन क्षेत्रों में मनुष्यों और मवेशियों की आबादी अपर्याप्त जंगलों, खाद्यान्न और ईंधन के स्रोतों को तेजी से समाप्त कर रही थी। हड़प्पा के नगर निवासियों, किसानों और पशुचारकों की सम्मिलित आवश्यकताएँ इन क्षेत्रों में सीमित उत्पादन क्षमताओं से अधिक थी। इसलिए मनुष्यों और पशुओं की बढ़ती हुई आबादी के कारण जिसे अपर्याप्त स्रोतों का सामना करना पड़ रहा था, परिदृश्य का ह्रास हुआ।

जंगल और घास के मैदान धीरे-धीरे लुप्त होते जाने के कारण अब अधिक बाढ़ आ रही थी और अधिक सूखा पड़ रहा था। जीविका के इस आधार के नष्ट हो जाने के कारण इस सभ्यता की समस्त अर्थव्यवस्था पर बहुत दबाव पड़ा। लगता है कि धीरे-धीरे लोग उन क्षेत्रों में बसने के लिए जाने लगे जहाँ जीविका की बेहतर संभावनाएँ थी। यही कारण है कि हड़प्पा समुदाय सिंधु से दूर गुजरात और पूर्वी क्षेत्रों की ओर चले गए।

आलोचना

अब तक जिन सिद्धांतों पर चर्चा हुई है, उन सभी में से फेयरसर्विस का सिद्धांत सर्वाधिक युक्ति-युक्त लगता है। संभवतः नगर नियोजन और जीवन स्तर में क्रमिक ह्रास हड़प्पा निवासियों का जीविका आधार समाप्त हो जाने के कारण था। ह्रास की यह प्रक्रिया आस-पास के समुदायों के आक्रमणों और छापों से पूरी हुई। तथापि पर्यावरण संकट के सिद्धांत में भी कुछ समस्याएँ हैं।

- भारतीय उपमहाद्वीप की भूमि की उर्वरता बाद के सहस्त्राब्दियों तक बनी रही, इससे इस क्षेत्र में भूमि की क्षमता समाप्त होने की प्राक्कल्पना उचित सिद्ध नहीं होती।

- साथ ही हड़प्पा निवासियों की ज़रूरतों की गणना अल्प सूचनाओं पर आधारित है और हड़प्पा निवासियों की जीविका संबंधी अपेक्षाओं की गणना करने के लिए काफ़ी अधिक और सूचना अपेक्षित है।

इस प्रकार हड़प्पा निवासियों की आवश्यकताओं के बारे में अपर्याप्त सूचना पर आधारित गणना तब तक मात्र प्राक्कल्पना ही रहेगी जब तक इसके पक्ष में और अधिक साक्ष्य नहीं जुटाए जा सकेंगे।

हड़प्पा-सभ्यता के आविर्भाव में नगरों कस्बों और गाँवों, शासकों, किसानों और खानाबदोशों के बीच संबंधों का नाजुक संतुलन था। उनके पड़ौस के क्षेत्रों में उन समुदायों से भी दुर्लभ लेकिन महत्वपूर्ण संबंध थे। इसी प्रकार, उनका समकालीन सभ्यताओं और संस्कृतियों से भी संपर्क बना हुआ था। इसके अतिरिक्त, हमें प्रकृति से साथ संबंध के लिए पारिस्थितिक घटक पर भी विचार करना होगा। संबंधों की इन शृंखलाओं की कोई भी कड़ी टूटने से नगरों के ह्रास का पथ प्रशस्त हो सकता था।

7.5 परम्परा बाद में भी जीवित रही

सिंधु-सभ्यता का अध्ययन करने वाले विद्वान अब इसके ह्रास के कारण नहीं खोजते। इसका कारण है कि जिन विद्वानों ने हड़प्पा-सभ्यता का अध्ययन 1960 के दशक तक किया था, उनका मत था कि सभ्यता का अंत अचानक हुआ। इन विद्वानों ने अपना कार्य नगरों, नगर नियोजन और बड़ी संरचनाओं के अध्ययनों पर ही केंद्रित किया। ऐसी समस्याएँ, जैसे हड़प्पा नगरों के समकालीन गाँवों से संबंध और हड़प्पा-सभ्यता के विभिन्न तत्वों की निरन्तरता की अनदेखी कर दी गई। इस प्रकार हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास के कारणों के संबंध में वाद-विवाद अधिक से अधिक अमूर्त बनता गया। 1960 के दशक के अन्तिम चरण में जाकर ही मलिक और पोशैल जैसे विद्वानों ने अपना ध्यान हड़प्पा परम्परा की निरन्तरता के विभिन्न पहलुओं पर केंद्रित किया। इन अध्ययनों के परिणाम हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास के कारणों की अपेक्षा कहीं अधिक उत्तेजक निकले हैं। यह सत्य है कि हड़प्पा और मोहनजोदड़ो को उनके निवासी खाली कर गए थे और नगर चरण समाप्त हो गया था। तथापि यदि हम हड़प्पा सभ्यता के सम्पूर्ण भौगोलिक प्रसार को परिप्रेक्ष्य में देखें तो काफ़ी वस्तुएँ उसी पुरानी शैली में चलती दिखाई देंगी।

पुरातात्विक दृष्टि से कुछ परिवर्तन ध्यान देने योग्य हैं। कुछ बस्तियाँ तो खाली कर दी गईं पर अधिकतर और बस्तियों में रिहाइश जारी रही। तथापि, एकरूप लेखन, मुहर, बांट और मिट्टी के बर्तनों की परम्परा समाप्त हो गई। दूर-दराज की बस्तियों के बीच घनिष्ठ अंतःक्रिया सूचक वस्तुएँ नष्ट हो गईं। अन्य शब्दों में नगर केंद्रित अर्थव्यवस्थाओं से संबंधित कार्यकलाप समाप्त हो गए। इस प्रकार जो परिवर्तन आए वे केवल नगर चरण की समाप्ति के ही सूचक थे। छोटे-छोटे गाँव और कस्बे तब भी बने रहे और इन स्थानों की पुरातात्विक खोजों में हड़प्पा-सभ्यता के अनेक तत्व मिले हैं।

सिंध में अधिकतर स्थानों में मृदभांड परम्परा में कोई अंतर दिखाई नहीं पड़ता। वस्तुतः गुजरात, राजस्थान और हरियाणा क्षेत्र के बाद के कालों में प्रवासी कृषि समुदायों का बहुत बड़ी संख्या में आविर्भाव हुआ। इस प्रकार क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य में नगर चरण के बाद का काल समृद्ध गाँवों का काल था। जिसमें नगर चरण के मुकाबले कहीं अधिक गाँव थे। यही कारण है कि विद्वान आज सांस्कृतिक परिवर्तन, क्षेत्रीय प्रवासन और बसने और जीविका के तंत्र में रूपान्तरण जैसे विषयों पर चर्चा करते हैं। तथापि कोई भी प्रारंभिक मध्यकालीन भारत में प्राचीन भारतीय सभ्यता नष्ट होने के बारे में बात नहीं करता जबकि गंगा घाटी के अधिकतर नगरों का ह्रास हुआ था। आइए देखें नगर चरण की समाप्ति के बाद भी किस प्रकार के पुरातात्विक अवशेष विद्यमान थे।

सिंध में, आमरी और चन्हुदाड़ों, झूकर जैसे हड़प्पा कस्बों में लोग ऐसे ही रहते रहे जैसे पहले रहते थे। वे अब भी ईंटों के मकानों में रहते थे पर उन्होंने सुनियोजित विन्यास त्याग दिया था। वे भिन्न मृद्भांड उपयोग में ला रहे थे जिसे झूकर मृद्भांड कहा जाता था। यह पांडुभांड थे जिनमें लाल सरक (slip) थी और काले रंग में चित्रकारी थी। हाल ही के अध्ययनों से पता चला है कि यह 'विकसित हड़प्पा' मृद्भांड से विकसित हुई थी और इसलिए इसे कोई नई चीज नहीं माना जाना चाहिए। झूकर में कुछ विशिष्ट धातु की वस्तुएँ मिली हैं जो ईरान के साथ व्यापार संबंधों की सूचक हो सकती हैं और इससे अधिक इस बात की भी संभावना प्रदर्शित करती है कि ईरानी अथवा मध्य एशिया प्रभावों वाले प्रवासियों का बड़ी संख्या में आगमन हुआ। दंड विवर, कुल्हाड़ियाँ, और तांबे की पिनें, जिनके सिरे कुडलाकार अथवा अलंकृत थे, जैसी वस्तुएँ यहाँ मिली हैं वैसी ईरानी बस्तियों में भी मिली हैं। पत्थर अथवा प्रकाचित वस्तु की गोलाकार मुहरें और कांस्य प्रसाधन जार सिंधु के पश्चिम की संस्कृतियों से संपर्क के सूचक हैं।

भारत-ईरानी सीमांत प्रदेश

सिंधु नदी के पश्चिम के क्षेत्र बलूचिस्तान और भारत-ईरानी सीमांत प्रदेश में भी उन लोगों के रहने के प्रमाण मिले हैं जो ठप्पेदार ताम्र मुहरें और ताम्र दंड विवर कुल्हाड़ियाँ इस्तेमाल करते थे। शाही टम्प मुंडीगाक, नौशारो और पीरक जैसे स्थलों पर लोगों के ईरान से आवागमन और सम्पर्कों के प्रमाण मिले हैं। दुर्भाग्यवश बस्तियों का काल निर्धारण अभी तक स्पष्ट रूप में नहीं किया जा सका है।

पंजाब, हरियाणा और राजस्थान

पंजाब, हरियाणा और राजस्थान के क्षेत्रों में ऐसी अनेक बस्तियों की सूचना मिली है जहाँ नगरों के ह्रास के बाद भी लोग उसी पुराने तरीके से रहते आ रहे थे। तथापि, मृद्भांड परम्परा पर हड़प्पा-सभ्यता के प्रभाव धीरे-धीरे क्षीण हो रहे थे और स्थानीय मृद्भांड परम्पराओं ने हड़प्पा मृद्भाण्ड परम्परा का पूरी तरह स्थान ले लिया। इस प्रकार, इन क्षेत्रों में प्रादेशिक परम्पराओं के अक्षुण्ण बने रहने से नगर रूप का ह्रास प्रतिबिम्बित होता है।

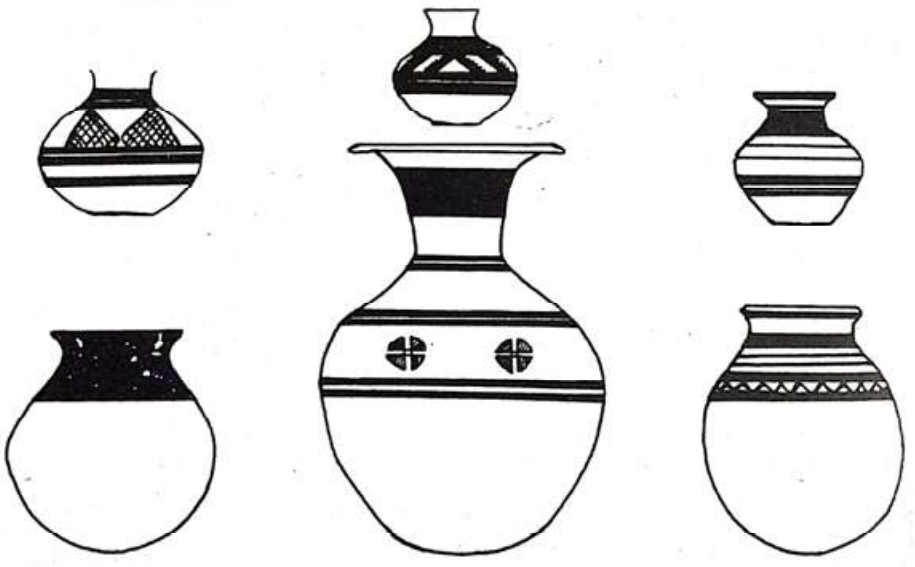

चित्र 7.1 : उत्तर हड़प्पा काल के मिट्टी के बर्तन हरियाणा से। स्रोतः ई.एच.आई.-02, खंड-2.

मीताथल, रोपड़ और सीसवाल के स्थल सुप्रसिद्ध हैं। बाड़ा और सीसवाल में ईंटों के मकान मिले थे। इनमें से कई स्थलों में गेरुए मृदभांड मिले हैं। प्राचीन भारत में अनेक प्रारंभिक ऐतिहासिक स्थलों में ऐसे मृद्भांड मिले हैं इसलिए पंजाब, हरियाणा और राजस्थान की ये ग्राम्य संस्कृतियाँ परवर्ती हड़प्पा परम्परा से संबंधित हैं और प्रारंभिक भारतीय परम्परा का पूर्वानुमान कराती हैं। इन पर परवर्ती हड़प्पा प्रभाव अल्प मात्रा में दिखाई देते हैं। यह केंद्र भारतीय सभ्यता के बाद के चरण का केंद्र बिन्दु बना।

कच्छ और सौराष्ट्र

कच्छ और सौराष्ट्र में नगर चरण का अंत रंगपुर और सोमनाथ जैसे स्थानों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। नगर चरण में भी उनकी हड़प्पा मृद्भांड परम्परा के सह अस्तित्व में स्थानीय मृद्भाण्ड परम्परा थी। यह परम्परा बाद के चरणों में भी बनी रही। रंगपुर जैसे कुछ स्थल बाद के काल में अधिक समृद्ध हो गए ऐसा प्रतीत होता है। वे जिन मृद्भांडों का उपयोग करते थे उन्हें ''चमकीले लाल भांड'' कहा जाता है तथापि लोगों ने दूरस्थ क्षेत्रों से आयातित औज़ार तथा सिंधु कालीन बाट और लिपी का उपयोग बंद कर दिया। अब वे स्थानीय रूप से उपलब्ध पत्थरों से बने पत्थरों के औज़ार काम में ला रहे थे।

''विकसित हड़प्पा'' चरण में गुजरात में 13 बस्तियाँ थीं। परवर्ती हड़प्पा चरण में जिसका काल लगभग 2100 बी.सी.ई. है, बस्तियों की संख्या 200 या इससे और अधिक तक पहुँच गई। बस्तियों की संख्या में यह वृद्धि जो जनसंख्या की वृद्धि की द्योतक है, केवल जैविक कारणों से ही नहीं हुई थी। पूर्व आधुनिक समाजों में जनसंख्या कुछ ही पीढ़ियों में इतनी अधिक नहीं बढ़ सकती थी कि 13 बस्तियाँ बढ़कर 200 या और अधिक हो जाएँ। इस प्रकार इस बात की निश्चित संभावना है कि इन नई बस्तियों में रहने वाले लोग अन्य क्षेत्रों से आए होंगे। परवर्ती हड़प्पा बस्तियाँ महाराष्ट्र में भी बताई गई हैं जहाँ उनकी संस्कृति उभरने वाले कृषि समुदायों की संस्कृतियों में विलीन हो गई।

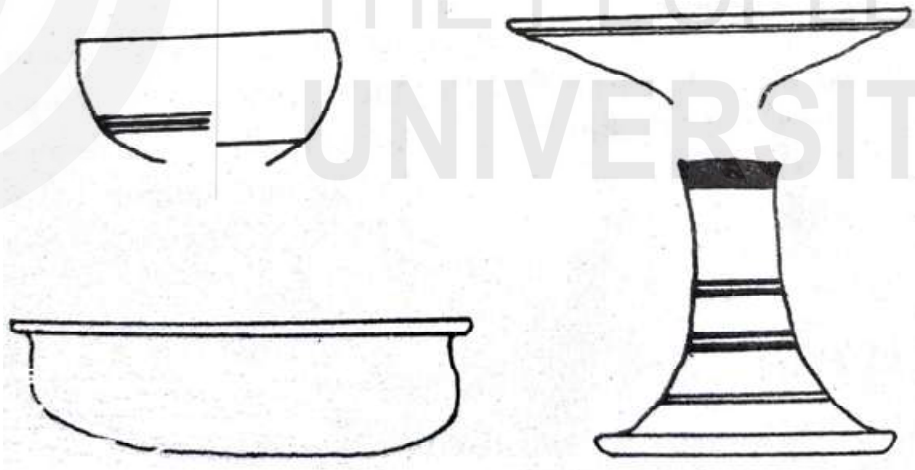

चित्र 7.2 : परवर्ती हड़प्पा मृदभांड, रूपनगर से। स्रोतः ई.एच.आई.-02, खंड-2.

7.6 हड़प्पा परम्परा का प्रसार

नगरों की समाप्ति का यह अर्थ नहीं था कि हड़प्पा सभ्यता का अंत हो गया था। हमारी चर्चा से स्पष्ट है कि पुरातत्व की दृष्टि से हड़प्पा के समुदाय आसपास के कृषि समुदायों में विलीन हो गये। तथापि व्यवस्था और अर्थव्यवसथा में केंद्रीय निर्णायन कार्य समाप्त हो गया था। जो हड़प्पा समुदाय नगर चरण के बाद भी बने रहे, उन्होंने अवश्य ही अपनी पुरानी

परम्पराओं को बनाए रखा होगा। इस बात की संभावना है कि हड़प्पा के किसानों ने अपनी पूजा का रूप बनाए रखा होगा। हड़प्पा नगर केंद्रों के पुरोहित अत्यन्त संगठित शिक्षित परम्परा के अंग थे। साक्षरता समाप्त हो गई थी, तब भी संभावना है, उन्होंने अपनी धार्मिक प्रथाएँ बनाए रखी होंगी। बाद के प्रारंभिक ऐतिहासिक काल के प्रभावी समुदाय ने अपने आप को ''आर्य' कहा। संभवतः हड़प्पा निवासियों के पुरोहित समूह आर्यों के शासक समूहों के साथ घुल-मिल गए। इस प्रकार हड़प्पा कालीन धार्मिक परम्पराओं का ऐतिहासिक भारत में प्रसार हुआ। लोक समुदायों ने दस्तकारी की अपनी परम्पराएँ भी बनाए रखी, जो मृद्भांड और औज़ार निर्माण परम्पराओं से स्पष्ट होता है। इस बार फिर जब शिक्षित नगरीय संस्कृति प्रारंभिक भारत में उदय हुई, उसने लोक संस्कृतियों के मूल तत्व समाविष्ट कर दिए। इससे हड़प्पा परम्परा के प्रसार का अधिक कारगर माध्यम मिला।

7.7 हड़प्पा-सभ्यता से क्या बचा?

पशुपति (शिव) और मातृ देवी की उपासना और लिंग पूजा हम तक संभवतः हड़प्पा परम्पराओं से पहुँची है। इसी प्रकार पवित्र स्थानों, नदियों या वृक्षों या पवित्र पशुओं की उपासना स्पष्टतः भारत के बाद की ऐतिहासिक सभ्यता में भी जारी रही। कालीबंगन और लोथल में अग्नि पूजा बलि का साक्ष्य भी महत्वपूर्ण है। यह वैदिक धर्म के सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य बन गये। क्या आर्यों ने यह प्रथाएँ हड़प्पा के पुरोहित वर्ग से सीखी थीं? इस प्राक्कल्पना के लिए और अधिक साक्ष्य की आवश्यकता है, पर ऐसा होने की संभावना तो है ही।

मकानों के नक्शे, जल-आपूर्ति व्यवस्था और स्नान पर ध्यान जैसे घरेलू जीवन के अनेक पहलू इन बस्तियों में बाद के कालों में भी जारी रहे। भारत की पारम्परिक तोल और मुद्रा की प्रणाली जो इकाई के रूप में सोलह के अनुपात पर आधारित थी, हड़प्पा-सभ्यता काल में भी विद्यमान थी। ये उन्हीं से ली गई प्रतीत होती है। आधुनिक भारत में कुम्हार का चाक बनाने की प्रविधि हड़प्पावासियों द्वारा अपनाई गई प्रविधियों के समान ही है। आधुनिक भारत में इस्तेमाल की जाने वाली बैल गाड़ियाँ और नावें हड़प्पा के नगरों में भी विद्यमान थीं। अतः हम कह सकते हैं कि हड़प्पा-सभ्यता के अनेक तत्व परवर्ती ऐतिहासिक परम्परा में भी जीवित रहे।

बोध प्रश्न 2

1) पारिस्थितिक असंतुलन का सिद्धांत स्वीकार करना कठिन है, क्योंकि (सही उत्तर पर (✓) का निशान लगाएँ)।

   i) इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि भूमि सिंधु घाटी क्षेत्र में आज भी क्यों उपजाऊ बनी हुई है? ( )

   ii) हड़प्पा कस्बों की ज़रूरतों के संबंध में बताने के लिए हमारे पास पर्याप्त आंकड़े नहीं हैं। ( )

   iii) कस्बों के लोग हड़प्पा में रहते रहे। ( )

   iv) (i) और दोनों (ii) सही हैं। ( )

2) सही विवरण पर (✓) निशान लगाएँ।

   विद्वान आजकल

   i) हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास के नए कारण खोज रहे हैं। ( )

ii) उन्होंने हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास के नए कारण खोजना बंद कर दिया है।( )

iii) इस बात की खोज कर रहे हैं कि परवर्ती बस्तियों में हड़प्पा-सभ्यता का क्या-क्या बचा? ( )

iv) (ii) और (iii) दोनों। ( )

3) हड़प्पा-सभ्यता से क्या-क्या बचा है उसके महत्व पर लगभग 50 शब्दों में प्रकाश डालें।

.....

.....

.....

.....

.....

7.8 सारांश

हमने देखा है कि विद्वानों ने हड़प्पा-सभ्यता के आकस्मिक ह्रास के विभिन्न सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं। लेकिन इन सभी सिद्धांतों को पर्याप्त साक्ष्य के अभाव में छोड़ना पड़ेगा। धीरे-धीरे विद्वानों ने हड़प्पा-सभ्यता के ह्रास के कारण खोजना बंद कर दिया है। अब हड़प्पा-सभ्यता के परवर्ती चरण को समझने पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। इसका इसलिए अध्ययन किया जा रहा है ताकि हड़प्पा-सभ्यता की वे निरन्तरताएँ प्रकाशित की जा सकें जो उस समय के समृद्ध कृषि समुदायों में जीवित रही होंगी। और निस्संदेह हड़प्पा-सभ्यता की कुछ ऐसी विशेषताएँ थीं जो ऐतिहासिक चरण में भी चलती रहीं।

7.9 शब्दावली

पारिस्थितिकी : पौधों, पशुओं, मनुष्यों और संस्थाओं का पर्यावरण के संबंध में अध्ययन।

विवर्तनिक उत्थापन : वह प्रक्रिया जिससे पृथ्वी के धरातल के बहुत बड़े क्षेत्र ऊपर उठ जाते हैं।

आर्य : एक जन समूह जो संस्कृत, लैटिन और ग्रीक आदि यूरोपीय भाषाएँ बोलता था।

दास* और *दस्यु : *ऋग्वेद* में उल्लिखित लोग। आर्यों का उनके सरदारों के साथ संघर्ष रहता था।

गेरुए मृद्भांड : उच्च गंगा मैदानों में पाए जाने वाले मृद्भांड। ये उन तलों पर पाए गए हैं जो प्रारंभिक भारतीय ऐतिहासिक मृद्भांड के आधार हैं।

परवर्ती तल : जिन पुरातात्विक स्थलों की खुदाई की जाती है वे अपने कालों के अनुसार परतों अथवा आवास तलों में विभक्त किए जाते हैं। अतः परवर्ती अथवा सबसे कम पुराना बस्ती तल स्थल के शीर्ष के पास होगा और सबसे पुराना सबसे नीचे की परत पर होगा।

रिहायशी संचय : जिस स्थल की खुदाई हो गई है, उसके प्रत्येक तल पर मृद्भांड आदि के रूप में यह दर्शाने के लिए साक्ष्य होंगे कि उस स्थल पर रिहायश थी। ये संचय रिहायशी संचय कहलाते हैं।

गाद : बहती हुई नदी के तटों पर जमा तलछट।

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) (ii), 2) (iv)

3) उपभाग 7.3.4 देखें। आपके उत्तर में भौतिक साक्ष्य और लिखित साक्ष्य दोनों शामिल होने चाहिए।

बोध प्रश्न 2

1) (iv), 2) (iv)

3) भाग 7.7 देखें। आपके उत्तर में यह स्पष्ट होना चाहिए कि इसमें हड़प्पा परंपरा की निरतंरता का संकेत कैसे मिलता है।

7.11 संदर्भ ग्रंथ

अग्रवाल, डी.पी. और चक्रबर्ती, डी.के. (1979) (ऐड). *ऐसैज इन इंडियन प्रोटो-हिस्ट्री.* नई दिल्ली।

ऑलचिन, ब्रिजैड और एफ.आर. (1988). *द राईज ऑफ सिविलाईज़ेशन इन इण्डिया एण्ड पाकिस्तान.* नई दिल्ली : सिलेक्ट बुक सर्विस.

कोसाम्बी, डी.डी. (1987). *द कल्चर एण्ड सिविलाईजेशन ऑफ ऐंशियण्ट इण्डिया इन इट्स हिस्टोरिकल आऊटलाईन.* नई दिल्ली : विकास।

लाल, बी.बी. और गुप्ता, एस.पी. (1982) (ऐडिटेड). *फ्रण्टियर्स ऑफ द इंड्स सिविलाईजेशन.* नई दिल्ली।

मार्शल, जोन (1973). *मोहनजोदड़ो एण्ड द इंड्स सिविलाईजेशन,* वॉल्यूम-I और II, (पुनर्प्रकाशित)।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY